श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
ब्रह्मज्ञान ही अमृत है।
सरसावा

तारतम मंजरी

वर्ष ४ अंक ८ अगस्त २०१६ बुद्धजी शाका ३४१ विक्रम सवंत २०७६ पृष्ठ संख्या ३२

ब्रह्मज्ञान ही अमृत है

प्रेम ही जीवन है

आध्यात्मिक उन्नति के आठ सूत्र

१. नियमित ध्यान २. नियमित स्वाध्याय ३. सात्विक अल्पाहार
४. प्रबल पुरुषार्थ ५. परब्रह्म के प्रति समर्पण एवं गुरुजनों के कथनों के प्रति श्रद्धा
६. शिष्टाचार ७. दृढ़ संकल्प ८. अटूट आत्मविश्वास

स्वत्वाधिकारी

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड रोड, सरसावा, जिला-सहारनपुर, उ.प्र.

Email : shriprannathgyanpeeth@ gmail.com **Youtube**: SPJIN **Website**: www. spjin.org
Twitter : @Raajan Swami **Whats App**: +917533876060 ;

अनुक्रमणिका

1.	सम्पादकीय	सतगुरु प्रसाद आर्य	1
2.	क्या देवता, परमात्मा और भगवान अलग–अलग हैं?	आचार्य सुभाष	5
3.	विरह की पीड़ा	जै किशन निजानन्दी	11
4.	कबीर वाणी का मन्तव्य	डॉ. प्रवीन	13
5.	सत्य की खोज	गीता ठाकुर	20
6.	हमें क्या करना है?	बबली (नलिनी) ढीगंरा	23
7.	दुख न देऊं फूल पाँखड़ी	कृष्ण कुमार कालड़ा	26
8.	भगवान शिव	प्रिया स्नेह	28
9.	कुछ घरेलू नुस्खे	आचार्य सुभाष / धरमराज	29

'तारतम मंजरी के पाठकों से निवेदन'

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा से 'मासिक प्रकाशित होनेवाली " तारतम मंजरी' " पत्रिका वेवसाईट के साथ साथ व्हाट्सएप, फेसबुक के माध्यम से आप सभी के हाथों तक पहुचाने का प्रयास किया जाता है। अब नयी योजना के अन्तर्गत 'व्हाट्सएप में एक ग्रुप बनाई जायेगी, उस ग्रुप में केवल "तारतम मंजरी" ही प्रत्येक महीने डाली जायेगी'। सभी पाठकों से निवेदन है कि ग्रुप में जुडने के लियें आप 'अपना व्हाट्सएप नम्बर व्यक्तिगत रुप से या ईमेल के माध्यम से पूरा नाम,पता सहित भेजें'।

E-mail: tertammanjari@gmail.com
सम्पर्क सूत्र :–
+91 9725389547 (आचार्य सुभाष जी)
+91 9314193262 (जुनेजा बाबूजी)

सदस्यता शुल्क

सदस्यता शुल्क

भारत में	विदेश में
वार्षिक 130 रू.	.....
आजीवन 1200 रू.	.....

लेख में प्रगट किये गये विचार लेखक के व्यक्तिगत विचार हैं इनके प्रति सम्पादक, प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र सहारनपुर होगा।

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232
सम्पर्क सूत्र–8650851010

Youtube:SPJIN
वेबसाईट :– www.spjin.org
ई मेल :– shriprannathgyanpeeth@gmail.co

सम्पादकीय

बुद्धिजीवी व्याकरण शास्त्री संत समाज ही इस पोस्ट को समझ सकते हैं व्याकरण के बिना शास्त्र अर्थ करना अधूरा

वेद में लिखा है–**"धर्मं चर,"** अर्थात् धर्म करो; **"धर्मेण सुखमासीत्,"** अर्थात् धर्मसे सुख होता है; **"धर्मान्न प्रमदितव्यम्** ", अर्थात् धर्म में प्रमाद या असावधानी नहीं करनी चाहिये. अब देखना यह है कि वह धर्म क्या है,जिससे सुख मिलता है.इसका विचार करने के लिये सबसे पहले "धर्म" शब्द के अर्थ की ओर ध्यान देना चाहिये.

"धर्म" शब्द व्याकरण की रीतिसे"(धृञ् धारणे" धातु के आगे "(मन)" प्रत्यय लगाने से बनता है.इस की व्युत्पत्ति तीन प्रकार से होती है –

(१) **ध्रियते लोकः अनेन इति धर्मः** – जिससे लोक धारण किया जाय,वह धर्म है
(२) **धरति धारयति वा लोकम् इति धर्मः** – जो लोग को धारण करे,वह धर्म है
(३) **ध्रियते यः स धर्मः** – जो दूसरोंसे धारण किया जाय,वह धर्म है

महाभारत में धर्म का यह लक्षण बताया गया है –

धारणाद्धर्ममित्याहुर्धर्मोधारयतेप्रजाः
यत्स्याद्धारणसंयुक्तंसधर्मइति–निश्चयः कर्ण ६९–५८

धारण करने से लोग इसे धर्म कहतें है.धर्म प्रजाको धारण करता है.जो धारण के साथ रहे,वह धर्म है–,यह निश्चय है.

इससे सिद्ध होता है कि "धर्म" बहुत व्यापक शब्द है.अमरकोष के अनुसार "धर्म" शब्द के अनेक अर्थ है; यथा **१ सुत या पुण्य, २ वैदिक विधि–यागादि, ३ यमराज, ४ न्याय,५ स्वभाव, ६ आचार, ७ सोमरस पीनेवाला,** अन्य कोषों में धर्म के ये अर्थ लिखे मिलते है– **१ शास्त्रोक्त कर्म के अनुष्ठान से उत्पन्न होनेवाले भावी साधनरूप शुभ अष्ट या पुण्यापुण्यरूप भाग्य,२श्रौत और स्मार्तधर्म, ३ विहित क्रिया से सिद्ध होनेवाला गुण या कर्म–जन्य अष्ट,४ आत्मा,५ देह को धारण करने से जीवात्मा, आचार या सदाचार,६ वस्त्र का गुण, ७ स्वभाव, ८ उपमा, ९ याग आदि, १० अहिंसा, ११ न्याय, १२ उपनिषद्, १३ धर्मराज या यमराज, १४ सोमाध्यायी, १५ सत्सङ्ग, १६ धनुष, १७ ज्यौतिष मतमें लग्न से नवमस्थान या भाग्यभुवन, १८ दान आदि.**

किंतु "धर्म" शब्द का धातुगत अर्थ तो धारण करना ही होता है. निरुक्तमें "धर्म"शब्द का अर्थ नियम बताया गया है. इन दोनों के मेल से "धर्म" शब्द का यही वास्तविक अर्थ होता है कि **जिस नियम ने इस लोक या संसार को धारण कर रखा है, वही धर्म है.**

आगे बताया जायगा कि वह नियम कौन सा है,जिसने इस लोक या संसार को धारण कर रक्खा है और किन नियमों के अनुसार चलने से सुख होता है; क्योंकि वेदमें लिखा है कि धर्मसे सुख मिलता है. लोक में भी कहतें है –**"धनाद्धर्मं ततः सुखम् "**, धनसे धर्म होता है और धर्मसे सुख होता है.यह सुख दो प्रकार का है– **एक तो इस लोक का सुख और दूसरा परलोकका सुख.इसलिये जिससे इन दोनों प्रकार के सुखो की प्राप्ति हो,वही धर्म है**. सभी लोग सुख के लिये प्रयत्न करतें है और उसका साधन धर्म है; अतएव वैशेषिक दर्शन के रचयिता महर्षि कणाद ने धर्म का यह लक्षण कहा है– "**(यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः)**" **जिससे इस लोक में उन्नति और परलोक में कल्याण या मोक्ष की प्राप्ति हो,वह धर्म है.**

इस धर्म का मूल या जड़ वेद है,मनु महाराज ने कहा है–"**(वेदोऽखिलो धर्ममूलम् २/६)**" समस्त वेद अर्थात् ऋक्,यजुः, साम और अथर्व–वेद धर्म का मूल है.

श्रीमद्भागवत में भी स्पष्ट कहा है–

"**(वेदप्रणिहितो धर्मो ह्यधर्मस्तद्विपर्ययः ६/१/४४)**"

वेद में कहा हुआ धर्म है और उससे विपरीत अधर्म है.मीमांसा–दर्शन में दूसरा धर्म का लक्षण है––"**(चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः)**"वेद में जिसकी प्रेरणा की गयी है,वह पदार्थ धर्म है.अर्थात् वेद में लिखे अनुसार कर्म करना धर्म है और उसमें निषेध किये हुए कर्मका न करना भी धर्म है.वेद में लिखे हुए वर्णाश्रमधर्मों का न मानना और मना किये हुए कर्मों का करना अधर्म है.

धर्म का तीसरा लक्षण है–

"**(वेदविहितत्वम्)**"

जो वेद में कहा गया है; वह धर्म है.

धर्म का चौथा लक्षण है–

"**(क्रियासाध्यत्वे सति श्रेयस्करत्वमिति लौकिकाः)**"

क्रिया या कर्म द्वारा सिद्ध होकर कल्याणकारी होना धर्म का लक्षण है–यह लौकिक पुरुषों का मत है

धर्म का पाँचवाँ लक्षण इस भाँति कहा गया है–

"**(सत्याज्जायते,दयया दानेन च वर्धते, क्षमायां तिष्ठति,क्रोधान्नश्यति)**"

धर्म की उत्पत्ति सत्य से होती है, दया और दान से वह बढ़ता है,क्षमामें वह निवास करता है और क्रोधसे उसका नाश होता है.

मनुस्मृति में धर्मका छठा लक्षण यह बताया है–

"**(वेदःस्मृतिःसदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् २/१२)**"

वेद,स्मृति या धर्मशास्त्र, सदाचार या सत्पुरुषों का आचरण और अपनी आत्मा की

प्रसन्नता – यह चार प्रकार का धर्म का लक्षण (परियाचक) है।

"(श्रुतिस्मृतिभ्यामुदितं यत् स धर्मः प्रकीर्तितः)"

श्रुति(वेद) और स्मृति(धर्मशास्त्र)में जो कहा गया है, वह धर्म कहलाता है.

"(श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम् मनु२/६)

श्रृति और स्मृतिमें कहे हुए धर्म को करता हुआ मनुष्य इस लोकमें यश को पाता है और मरकर परलोक में उत्तम सुख या मोक्ष को प्राप्त होता है. **"(आचारः प्रथमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त एव च द्यद्य तस्मादस्मिन् सदा युक्तो नित्यं स्यादात्मवान् द्विजः१/१०८** श्रृति और स्मृतिमें वर्णित सदाचार परम धर्म है.इसलिये अपने आत्माको जाननेवाला(आत्मज्ञानी)द्विज सदा सदाचार से युक्त रहै.

"(एक एव सुहृद धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यत्तु गच्छति)"

एक धर्म ही ऐसा मित्र है, जो मरनेपर भी जीव के साथ जाता है; और सब तो शरीर के नाश के साथ ही छोड़कर चले जातें है.

वेद में धर्म के तीन स्कन्ध बतायें है–

"(त्रयो धर्मस्कन्धा यज्ञोऽध्ययनं दानमिति प्रथमस्तप एव द्वितीयो ब्रह्मचर्याचार्यकुलवासी तृतीयोऽत्यन्तमात्मनमाचार्य कुलेऽवसादयन् सर्व एते पुण्यलोका भवन्ति ब्रह्मसँस्थोऽमृतत्वमेति छा २/२३/१)"

धर्म के तीन स्कन्ध वा विभाग या आधारस्तम्भ है.यज्ञ, अध्ययन या स्वाध्याय और दान – यह पहला स्कन्ध है.तप ही दूसरा स्कन्ध है. आचार्यकुलमें रहनेवाला ब्रह्मचारी,जो आचार्यकुल में अपने शरीर को अत्यन्त क्षीण कर लेता है,यह तीसरा स्कन्ध है.ये सभी पुण्यलोकके भागी होतें है. ब्रह्ममें सम्यक प्रकार से स्थित (चतुर्थाश्रमी संन्यासी) अमृतत्व को प्राप्त होता है.

इसी "धर्म" शब्द के पहले स्व जोड़ने से "स्वधर्म" शब्द बनता है, जिसका अर्थ – अपना वर्णाश्रम धर्म" होता है.

उसीके पूर्व "पर"जोड़नेसे "परधर्म" शब्द बनता है.उससे तात्पर्य अपने वर्णाश्रम–धर्म को छोड़कर दूसरे पुरुषके वर्णाश्रम–धर्म से है.

उसीके पहले "वि" उपसर्ग लगाने से "विधर्म" शब्द बनता है.उसका अर्थ "विगतः धर्मेण विधर्मः" होता है.जो अपने धर्म से गिर जाय अर्थात् जो धर्मान्तरित हो जाय,वह विधर्म है.श्रृति–स्मृति में कहे हुए धर्मों को छोड़कर सब धर्म विधर्म है.अतः अपने धर्म को छोड़कर अन्य धर्म को स्वीकार करनेवाला "विधर्मी" कहा जाता है.

उसीके पहले "कु" उपसर्ग लगाने से "कुधर्म" शब्द बनता है.उसका अर्थ **"(कुत्सितः धर्मः कुधर्मः)"** अर्थात् जो धर्म निन्दा के योग्य हो; वह कुधर्म है.कुधर्म पापाचरण या बुरे आचरण को कहतें है.कुधर्म शब्द का एक अर्थ और भी होता है; वह यह कि जो धर्म अन्य धर्म में बाधा दे, वह "कुधर्म" कहाता है। यथा –

"**(धर्मं यो बाधते धर्मो न स धर्मः कुधर्म तत् द्यद्य अविरोधी तु यो धर्मः स धर्मः सत्यविक्रमः)**"

जो धर्म दूसरे धर्मको बाधा दे, वह धर्म नहीं है,किंतु कुधर्म है.जो धर्म समस्त धर्मों का अविरोधी है, वही यथार्थ धर्म है.

धर्म के पहले "नञ्" जोड़ने से "न धर्मः अधर्मः"– "अधर्म शब्द बनता है.उसका अर्थ –जो धर्म से बिल्कुल विपरीत हो, वह अधर्म कहाता है. **इस अधर्म के पाँच भेद है––१ विधर्म, २ परधर्म, ३ धर्माभास, ४ उपधर्म, ५ छलधर्म**... इन में से "१ विधर्म और २ परधर्म के अर्थ तो पहले लिखे जा चुके है। "वेदके खण्डन से पाखण्डाचार या दम्भ अर्थात् ढोंग को "उपधर्म" कहतें है। अपने ही मनसे किसी काम को धर्म कहकर करना "धर्माभास" है... प्रचलित अर्थ को छोड़कर दूसरे प्रकारका अर्थ करके जिस धर्म की व्याख्या की जाय, वह "छलधर्म" है....

उपर "कुधर्म" का भी अर्थ लिखा जा चुका है. इन छहों प्रकारके अधर्मों का परित्याग करना धर्म" है.. अपना स्वधर्म ही सबको शान्तिदायक होता है. भगवान् ने कहा––"**(स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः)** स्वधर्म में मरना श्रेष्ठ है.परधर्म भयकारी है.समस्त प्राणियों का वही परम धर्म है, जिससे भगवान् में निष्काम, अटल और अचल भक्ति हो और जिसके करने से आत्मा प्रसन्न होती हो.जिस ओर धर्म होता है, उसकी जय होती है..कहा भी है–––"**(धर्मेण हन्यते व्याधिर्धर्मेण हन्यते ग्रहः धर्मेण हन्यते शत्रुर्यतो धर्मस्ततो जयः)**" धर्म से रोग नष्ट होते है, धर्म से मानसिक पीड़ा मिटती है. धर्म से शत्रु–नाश होता है; जहाँ धर्म होता है, वहाँ विजय होती है.

सतगुरु प्रसाद आर्य

फिजूलखर्ची से बचें

विगत 10 वर्षों में अधिकतम घरों की अर्थिक स्थिति बिगड़ने के प्रमुख कारण :

1. घर मे प्रत्येक सदस्य के पास स्मार्ट फोन, एवं प्रति वर्ष नया लाना।
2. जन्म दिन, मैरिज एनीवर्सरी में दिखावटी खर्चे।
3. जीवन शैली में बदलाव के कारण खर्चों का बेतहाशा बढ़ना।
4. बच्चों के स्कूल, ट्यूशन आदि शिक्षण खर्चों में वृद्धि।
5. व्यक्तिगत खर्चे, ब्यूटी पार्लर, सेलून, ब्रांडेड कपड़ा, पार्टी, गेट टूगेदर आदि।
5. सगाई, शादी आदि में प्रतिष्ठा की भूख के कारण होने वाले खर्चे।
6. लोन पर दिया जाने वाला ब्याज।
7. मेडिकल खर्चों में बहुत ज्यादा बढ़ोत्तरी। कारण गलत खान पान। इस तरह के बिना जरूरत के खर्चो के अनुरूप कमाई बढ़ नही रही है। परिणाम, तनाव तनाव तनाव।

बिना जरूरत के खर्चे कम करे। जरूरत रोटी, कपड़ा, मकान की थी, है, और रहेंगी। इच्छाएं अनन्त है...

क्या देवता, परमात्मा और भगवान अलग-अलग हैं?

आचार्य सुभाष, श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा

अखिल (सम्पूर्ण) ब्रह्माण्ड के रचयिता परमात्मा के लिए मुख्यतः तीन शब्दों का प्रचलन आम जनता में प्रचुर मात्रा में दिखाई देता है। यह तीन शब्द हैं– ईश्वर, देवता और भगवान। धर्म भीरु, भोली व सत्य शास्त्रों के प्रति अबोध जनमानस में इन तीनों शब्दों को प्रायः समानार्थक ही माना जाता है।

जिस कर्मकांडी ब्राह्मण वर्ग से सामान्य जन सही विवेचना करते हैं, उनमें ही इन तीन शब्दों के विषय में घोर अज्ञान पाया जाता है। वे तीनों को एक ही मानते हैं।

इन तीनों शब्दों में से देवता शब्द के विषय सबसे अधिक भ्रम है, जो सारे देश में फैला हुआ है। इस शब्द, हमारे पूर्वज ऋषियों के द्वारा किये गए वास्तविक अर्थ को हम समझ लें तो इस देश में व्याप्त एक बहुत बड़े भ्रम का निराकरण हो सकेगा व सत्य देवताओं की पूजा कर हम अपने कल्याण के साथ ही विश्व का भी कल्याण कर सकेंगे।

आइये हम निम्न पंक्तियों मे प्रथम "देवता" शब्द पर विचार करेंगें–

शास्त्रकारों ने देवता दो प्रकारके बताए हैं–

1. जड, 2. चेतन पहले हम चेतन देवता पर संक्षेप में विचार करें।

"देव" परमात्मा को भी कहा है, क्योंकि उसने ही सृष्टि के प्रारम्भ में पावन वेद वाणी का दान, ऐवं सूर्यादि जड़ देवताओं की रचना कर जीवों का परम उपकार किया है। इसलिए वह देवों का देव 'महादेव' है।

चेतन देवता मातृ देवो भवः, पितृ देवो भवः, आचार्य देवो भवः, अतिथि देवो भवः ।।
तैंत्तिरीयोपनिषद् 333

माता, पिता, साक्षात् देवता हैं। जिस गृह में माता–पिता और वृद्ध अपने पुत्र व पुत्र बधुओं से उनकी सेवा से प्रसन्न रहते हैं, वहां सौभाग्य की वृद्धि होती है।

ऐसे घर में प्रतिदिन संध्या एवं सत्संग भी होता हो तो वह घर मंदिर से कम नहीं। इसी को स्वधा कहते हैं।

सर्व तीर्थमयी माता सर्व देवमयः पिता ।
मातरं पितरं तस्मात् सर्वलयेंन पूजयेत ।।

अर्थ –माता सर्व तीर्थमयी है और पिता सर्व देवताओं का स्वरुप है। इसलिए सब प्रकार से माता–पिता की सेवा सत्कार करना चाहिए।

यज्ञोपवीत के तीन तार होते हैं, उनमें एक तार संतान को पितृ ऋण का स्मरण रखने और उसको उतारने हेतु संकल्पबद्ध होने की याद दिलाता है।

माता पिता के उपकारों का वर्णन विश्व का कोई पुत्र पुत्री वाणी के द्वारा नहीं कर सकता। महाभारत में यक्ष और युधिष्ठिर का बड़ा ही प्रेरक संवाद है । एक प्रश्न में यक्ष ने पूछा था –

प्रश्न– किं स्विद गुरुतरं भूमेह ?
धर्मराज ने उत्तर दिया–
उत्तर – माता गुरुतरा भूमेह। माता का गौरव पृथ्वी से अधिक है। माता के उपकारों का भार इतना अधिक होता है कि पृथ्वी का वजन भी न्यून प्रतीत होता है।

यक्ष ने पुनः अगला प्रश्न पूछा "किं स्विदुच्चतरम च खात ?''
धर्मराज युधिष्ठिर ने उत्तर दिया "खात पितोच्चतरस्तथा"

प्रश्न– आकाश से भी ऊंचा क्या है?
उत्तर– पिता आकाश से भी ऊंचा होता है। माता पिता अपने संतानों के लिए चंदन की तरह अपने शरीर को जीर्ण कर देते हैं। और उनका जीवन सुखमय बनाने हेतु पूरा जीवन लगा देते हैं। आचार्य आध्यात्मिक व भौतिक विद्याओंका ज्ञान–दान करनेवाले विद्वान व गुरु भी देवता हैं।

शतपथ ब्रह्मण में आया है कि 'विद्वांसो हि देवा' राष्ट्र के तीन शत्रु कहे गए हैं १. "अज्ञान", २. "अभाव", ३. अन्याय इनमें अज्ञान ही मूलतः दो अभाव और अन्याय का जनक है। आज समाज का व देश का अनेक समस्याएं आध्यात्मिक सत्य ज्ञान के अभाव के कारण ही है।

अतिथि भी चेतन देवता है। जो विद्वान धार्मिक, सत्योपदेशक, मानव मात्र के कल्याणार्थ भ्रमण करते हुए अचानक गृहस्थ के दरवाजे पर उपस्थित हो जाते हैं। उन्हें 'अतिथि' कहते हैं। ऐसे सन्यासी, उपदेशक, महात्मा की सेवा शुश्रुषा कर अन्नादि से तृप्त करना अतिथि यज्ञ कहाता है। अथर्ववेद कां १५ सू १०–१४, ६ के ६ सूक्त में अतिथि यज्ञ की महिमा का उत्तम वर्णन है।

स्वर्गलोकं गमयन्ति यदतिथयःद्य अथर्व सूक्ति ६/६/२३

अर्थात् अतिथि मनुष्य को स्वर्गलोक में ले जाते हैं। अर्थात् उत्तम उपदेशों के माध्यम से अनेकों सुख प्रदान करते हैं। स्वर्ग इस संसार को ही कहा गया है, जहाँ सुख–सुविधा हो, प्रातिक वातावरण शुद्ध हो। जैसे की कश्मीर की घाटी को भी स्वर्ग कहा जाता है।

जड़ देवता वेदमन्त्रों का विषय भी देवता कहाजाता है। अतः अन्य देवताओं पर विस्तार से मनन करेंगे जो इस विषय का मुख्य प्रयोजन है।

वर्तमान समय में भारत में दो प्रकार के देवतओं का पूजन प्रचलित है, १). मनुष्य कृत २). ईश्वर कृत।

मनुष्य कृत देवता जिन देवताओं को बनाने में मनुष्य का हाथ किसी न किसी रूप में लगा हो वे सभी देवता मनुष्य के बनाए हुए माने जाने चाहिए।

ईश्वर–परमात्मा कृत देवता इन देवताओं की रचना ईश्वर ने संसार के प्रारंभ में सृष्टि की उत्पत्ति के समय की थी। उनसे सारे श्य–अश्य, जड़–चेतन जगत का कार्य संचालन व पालन हो रहा है। इन देवताओं में जो–जो गुण परमात्मा ने निश्चित किये हैं, उनका धारण परमात्मा इस ब्रह्माण्ड में सर्वत्र ओत–प्रोत, व्यापक होकर स्वयं कर रहा है, अतः यह सब देव ईश्वरीय नियमानुसार सृष्टि के आदि से प्रलय पर्यंत विश्व के कल्याणार्थ अपने गुणों का प्रकाश करता हैं। जीव के निवास इस मानव शरीर एवं सूक्ष्म जीव–जन्तुओं से लेकर हाथी पर्यन्त के शरीर के व्यापार भी ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था के अनुसार यह जड़ देवता ही ईश्वर आज्ञा से करते हैं।

"देवता पहचानने की कसौटी–

वर्तमान समय में उपलब्ध निरुक्त में महर्षि यास्क ने लिखा है।

देवो दानाद्वा, दीपनाद्वा, द्योतनाद्वा, द्युस्थानो भवतीतिवा ।
निरुक्त अ. ७/खंड १५ एवं ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका

सच्चे देवता कितने हैं ?

शतपथ ब्राह्मण कार याज्ञवल्क्य ऋषी ने लिखा है।

त्रयरिअन्शत्वेव देवा इति। शतपथ कांड १४/अ .६

ये देवता तैंतीस हैं। प्रायः जन मानस में देवता कितने हैं? इस पर चर्चा के समय तैंतीस कोटी देवता हैं। ऐसी बात प्रचलित हैं। जिससे ऐसा प्रतीत होता हैं कि देवता तैंतीस करोड़ हैं, किंतु कोटी शब्द के दो अर्थ स्पष्ठ हैं। (१) करोड (२) प्रकार, श्रेणी। वस्तुतः देवता तैंतीस प्रकार के हैं। व्यवहार में ये ही देवता माने गये हैं। लेखक का नम्र निवेदन है कि पुर्वाग्रह से मुक्त होकर अगर सर्वहितकारी प्राचीन महान वैज्ञानिको के विचारों पर मनन कर सत्य को हृदयंगम करे तो संसार का कल्याण हो जाय।

अष्टौ वसवः,एकादश रुद्राः,
द्वादशादित्यास्तएक त्रिंश द्विद्र श्चैव
प्रजापति श्च भय रिन्न शाविति।
शतपथ ब्रा.,ऋ.भा. भू .

ईश्वर रचित तैंतीस जड़ देवता हैं। आठ वसु,

ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, एक इंद्र एवं एक प्रजापति (यज्ञ)। कुल तेंतीस देवता हैं। इन तैंतीस देवताओं का वेद में पुनः वर्णन देखें।

यस्य त्रयः त्रिंशत् देवा ओ सर्वे समाहिताः। स्कम्भं तं ब्रूहि कतेमः स्वि देवः सः। अथर्व वेद .कां १० सु .७ मंत्र १३ .

अर्थात् सब तैंतीस देव जिसके शरीर में स्थिर हुये हैं उस सर्वधर के विषय में बातावो कि वह कौन हैं?

अब ईश्वर विषय पर कुछ चिंतन करेंगे। 'ईश्वर ' पर सब कुछ अर्थात् पूर्ण रूप से लिखना अल्पज्ञ और अल्प शक्तिमान जीव की शक्ति से परे है।

एक संस्त के कवि ने लिखा है –

असित गिरी समं स्यात कज्जलं सिन्धु पात्रे । सुरतरुवर शाखा लेखनी पत्र मूर्वी । लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ।।

अर्थात् यदि समुद्र की दवात बने, कृष्ण पर्वत की स्याही बना कर उस दावत में डाली जाय, कल्प तरु की शाखा की लेखनी बने, समस्त पृथ्वी कागज के रूप में प्रयुक्त हो और साक्षात् सरस्वती अनंत कल तक लिखती चली जाय तब भी हे ईश्वर! तुम्हारे गुणों का पार नहीं पाया जा सकता। फिर भी विषय प्रवाह बनाये रखने हेतु श्रेष्ठ व उत्तम साहित्य के रहते भी कुछ चिंतन प्रस्तुत करते है।

वेद का प्रत्येक मंत्र ईश्वर का वर्णन कर रहा है। वेद का मुख्य विषय, ईश्वर, ही है। मनुष्य जाति जब से वेद से अलग हुई है, तब से दृश्य को मानाने और अदृश्य को न मानाने की आदी हो गयी है।

ईश्वर सच्चिदानंद स्वरुप, सर्व शक्तिमान, न्यायकारी., दयालु, .अजन्मा, अनंत, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर सर्व व्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, .नित्य पवित्र और सृष्टि करता है। उसी की उपासना करनी चाहिए है।

किन्तु स्वाध्याय, सत्संग और मनन के आभाव में किसी साधारण मनुष्य द्वारा छल–कपट का सहारा लेकर दिखाए गए चमत्कारों से आज बड़े–बड़े बुद्धि जीवी भी धोखा खा जातें हैं। यह देखकर आश्चर्य भी होता है और तरस भी आता है। क्योंकि वे परमात्मा को आंतरिक दृष्टि खोलकर देखना नहीं चाहते।

संसार में ईश्वर रचित हर वस्तु परमात्मा के अस्तित्व की साक्षी दे रही है। परन्तु भौतिक आँखों से वह कैसे दिखाई देगी?

एक पवित्र ऋचा में कैसे सुन्दर भाव हैं।

अयम स्मि जरितः पश्य मेह विश्वा जतान्य भ्य स्मि मन्हा । ऋतस्य माँ प्रदिशो वर्ध यन्त्या दर्दिरो भुवना दर्दरीभि।। ऋग्वेद ८/१००/४

ईश्वर कहता है ''जस्तिः'' :– हे स्तुति करने वाले भक्त क्यों संदेह करता है। मैं तो यह रहा। तेरे ही पास। ''पश्य मा इह'' मुझे तू अपने अति निकट ही देख ले।

परमात्मा दर्शन हेतु ज्ञान चक्षु की आवश्यकता होती है । इसीलिए शायर कहता है

रोशन हैं मेरे जलवे, हर एक शै में लेकिन ।
है कोर चश्म तेरी क्या है कसूर मेरा ।।

किसी वस्तु के अस्तित्व में होने पर भी उसके दिखाई न देने के आठ वेदोक्त कारन विद्वानों ने बताये हैं।

(1) किसी वस्तु का अति दूर होना, जैसे आकाश में अति दूर उड़ाता उपग्रह या रॉकेट आदि।
(२) अति समीप होना, यथा, आँखों में काजल अपने आपको दिखाई नहीं देता।
(३) आवरण युक्त होना, जैसे, भूमि के अन्दर जल स्रोत, खनिज पदार्थ।
(४) इन्द्रियाँ दुर्बल होना (द्रष्टि शक्ति अति न्यून हो तो वस्तु दिखाई नहीं देती।)
(५) मन का एकाग्र न होना मन और आंख का संयोग न होना।
(६) अपने से तीव्र वस्तु से अभिभूत होना। अति तीव्र प्रकाश या अति अन्धकार से प्रभावित होना।
(७) सामान आकर की वस्तुएं मिल जाना जैसे वायु में, दूध में जल मिला दें तो जल अदृश्य हो जायेगा।
(८) अति सूक्ष्म होना।

उपरोक्त आठ बिन्दुओं पर गहराई से चिंतन करने पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि संसार में अनेक पदार्थ ऐसे हैं जिनका अस्तित्व है किन्तु नेत्रों से हम उन्हें देख नहीं सकते। क्या परिवार भूख या प्यास लगने पर माता या पत्नी के समक्ष भूख, प्यास को बाहर निकाल कर दिखा सकते हैं। इसी प्रकार मरीज अपने दर्द को डॉक्टर या वैद्य को नहीं दिखा सकता।

आइये देखें वह ईश्वर कैसा है?

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत् ।

हे मनुष्यों! ये सब चराचर, स्थावर जंगम, दृश्य–अदृश्य पदार्थ ब्रह्माण्ड में हैं। वह सब इश्वर से ओत–प्रोत हैं।

अणो रणी यान्महतो महीयानू कठोपनिषद बली २

वह परमात्मा सूक्ष्म से सूक्ष्म और महान से महान है

स हि सर्ववित् सर्व कर्ता सांख्या दर्शन ३/५६

वह परात्मा सर्वान्तार्यामी और सब जगत का कर्ता है।

तदेजति तन्ने जति तद्दूरिके तद्वन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदू सर्वस्यास्य बाह्यतः।।
यजुर्वेद अ. ४०

वह परमात्मा सारे संसार को गति देता है, किन्तु स्वयं गति शून्य है, अचल है। वह दूर भी है और समीप भी है। वही सारे संसार में अणु–परमाणु के अन्दर भी है और बहार भी है।

महान्तं विभु मात्मा नमू मत्वा धीरो न शोचति।। कठोपनिषद / वल्ली २

वह ईश्वर सब शरीरों में बिना शरीर के मौजूद है और चलायमान चीजों में स्थिर है ऐसे महान सर्वव्यापक परमात्मा को जानकर धीर जन शोक रहित हो जाते है।

परमात्मा के इसी स्वरुप का वर्णन श्री गोस्वामी तुलसी दास जी ने भी निम्न शब्दों में किया है।

बिनु पग चलहिं ,सुने बिनु काना ।
बिन कर कर्म करे विधि नाना ।।

वाणी उस पारब्रह्म स्वरुप का वर्णन करने में असमर्थ है। तभी उपनिषद कर ऋषि नेति–नेति कह कर अपनी असमर्थता प्रकट करते हैं।

ईश्वर अणु से भी सूक्षम और महान से भी महान है । इसी लिए वह नित्य है, अमर है, अजर है, अभय है और निर्वयव है, अकाय है।

अब हम भगवान विषय पर कुछ विचार करेंगे। वर्त्तमान स्थिति में भारत के हर प्रान्त में अनेक भगवान पैदा हो चुके हैं। जहां भी देखिये वहां भगवान ही भगवान नज़र आते हैं। पुराणों में इस कलयुग की २८ वीं चतुर्यगी में भगवान (ईश्वर) के दशावतार की चर्चा सुनते आये हैं।

यथा हम धन वाले को धनवान, विद्या वाले को विद्वान कहते हैं। उसी प्रकार भग वाले को भगवान कहा जाता है। प्रथम भग शब्द पर विचार करें।

भग संस्कृत का शब्द है।

एश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यश स श्रियः ।
ज्ञान वैराग्य यो श्चैव श ण णो भग
इतिरणा ।।

अर्थात सम्पूर्ण एश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्य इन छः का नाम भग है। इन सब लक्षणों से भी अनंत गुण जिसमें हैं वह ईश्वर (परम भगवान) है, किन्तु जिन महान मानवों में भग के उपरोक्त गुण पाए जाते हैं, या वे संसार भर के लिए इन गुणों के चरम उत्कर्ष को अपने जीवन में धारण करते हुए आदर्श प्रस्तुत करते हैं उन्हें भी हम भगवान कह के संबोधित करते हैं। उपरोक्त गुणों से युक्त हो कर मानव जाति को अज्ञान, अत्याचार, भय, शोषण से मुक्ति दिलाने वालों को भी भगवान माना गया है। जैसे भगवान राम, भगवान कृष्ण, हनुमान आदि। प्रणाम जी

आवश्यक सूचना

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का **चौदहवां वार्षिकोत्सव,**
01 से 07 सितम्बर 2020 को मनाया जायेगा।

विरह की पीड़ा

जै किशन निजानन्दी, आसाम (नागालैण्ड)

अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत को प्रत्यक्ष करने के लिए हृदय से निकलने वाली आहों का घनीभूत रूप ही 'विरह' है। यह प्रेम से पूर्व की अवस्था है, किन्तु प्रेम की तरह ही शब्दातीत है। वस्तुतः प्रियतम के लिए किये जाने वाले विरह की नींव पर ही अध्यात्म जगत का स्वर्णिम महल खड़ा होता है। विरह से ही हमारा आध्यात्मिक श्रृंगार होता है और इसके द्वारा ही आत्म–जागृति का स्वर्णिम पथ भी प्राप्त होता है।

विरह के फूलों से उठने वाली सुगन्ध में इतनी मादकता होती है कि साधारण प्राणी तो क्या, बड़े– बड़े योगीराज भी इसकी थोड़ी सी सुगन्ध से बेसुध हो जाते हैं। यह संसार की सबसे अनमोल वस्तुओं (प्रेम, ज्ञान, एकत्व, शान्ति, अखण्ड सौन्दर्य, आनन्द आदि) में से एक है।

हद के जीवों के लिए विरह का रस प्राप्त कर पाना बहुत कठिन ही नहीं, प्रायः असम्भव ही होता है। यह तो बेहद मण्डल की ईश्वरी सृष्टि और परमधाम में विरह की लीला नहीं है, किन्तु जिस जीव पर ब्रह्मात्माओं की सुरता विराजमान होती है, मात्र उसे ही विरह का वास्तविक रस चखने का सौभाग्य प्राप्त होता है। जन्म–मरण की अग्नि में जलने वाले संसारी जीव विरह के नाम से ही भागते हैं। बेहद की ईश्वरी सृष्टि भी ब्रह्मसृष्टि की तरह विरह रस का रसास्वादन नहीं कर पाती है, यद्यपि वह इस मार्ग पर अपने कदम अवश्य रखती है।

विरह का मार्ग इतना पीड़ादायी होता है कि इस पर संसारी जीव चल ही नहीं पाते हैं। संसारी जीव तो क्या, स्वयं ईश्वरी सृष्टि के कदम भी लड़खड़ा जाते हैं। मात्र परमधाम की ब्रह्मसृष्टियाँ ही विरह की पीड़ा को अंगिकार करती है। परमधाम की ब्रह्मसृष्टियाँ ही अपने प्राण–प्रियतम से बिछुड़ी है। परमधाम की सुहागिन अपने प्राणवल्लभ के वियोग को किसी भी हालत में सहन नहीं कर सकती है। अपने प्राणवल्लभ के वियोग में विरहिनी को अपने शरीर तथा समस्त संसार विरह रूपी अग्नि की लपटों में जलता हुआ प्रतीत होता है। उसे ऐसा लगता है कि मेरे प्राण–प्रियतम के बिना तो यह संसार सारहीन, सूना एवं निरर्थक है। अपने प्राणेश्वर के बिना एक पल भी गुजारना विरहिनी के लिए बहुत ही कष्टकारी होता है।

बिछरो तेरो वल्लभा, सो क्यों सहे सुहागिन ।
तुम बिना पिंड ब्रह्मांड, हो गई सब अगिन ।।
क. हि 6/2

इस विरह की पीड़ा का अनुभव मात्र उसे ही होता है, जिसके हृदय में विरह की चोट लगी हो। विरह की चोट से विरहिनी के हृदय में ऐसी पीड़ा उठती है कि मानों उसके प्राण ही निकल जाएं। विरहिनी की विरह की पीड़ा कम होने का नाम ही नहीं लेती, बल्कि पल–पल वह फैलते (बढ़ते) जाती है। इस विरह की पीड़ा को समाप्त करने की कोई औषधि इस संसार में नहीं है। मात्र प्राणवल्लभ का मिलाप (दर्शन) ही विरहिनी की पीड़ा को शान्त कर सकता है। इसके सिवा और कोई उपाय नहीं है।

ए दरद जाने सोई, जिन लगे कलेजे घाव ।
ना दारू इन दरद का, फेर फेर करे फैलाव
।।क. हि. 5/5

इस संसार के बड़े–बड़े सुख भी विरह की पीड़ा को शान्त नहीं कर सकते हैं। विरह की पीड़ा में पड़ी हुई आत्माओं को तो संसार का सारा सुख भी कष्टदायी प्रतीत होता है। सुन्दर–सुन्दर वस्त्राभूषण भी विरहनि को अग्नि के समान लगते हैं। रत्नों से जड़े हुए महल में भी विरहिन को घुटन महसूस होती है। सोने और हीरे से जड़ी हुई मखमली शैय्या भी स्पर्श मात्र से विरहिन के शरीर को जलाने लगती है। संसार की बड़ी से बड़ी लुभावनी वस्तु भी विरह में तड़पती हुई आत्मा को नहीं भाती है। वह विरह की असह्य पीड़ा में तड़पती रहती है।

ए दरद तेरा कठिन, भूखन लगे ज्यों दाग ।
हेम हीरा सेज पसमी, अंग लगावे आग ।।
क. हि. 5/6

आवश्यक सूचना

सुन्दरसाथ के चरणों में विनम्र प्रार्थना है कि जो भी सुन्दरसाथ लिखने में कुशल,योग्य है। जो अपना भाव तारतम वाणी और शास्त्रों के माध्यम से दूसरों तक पहुंचाना चाहते हैं ऐसे सुन्दरसाथ अपना लेख ईमेल (E-mail) या वटसप (watsapp) के माध्यम से ज्ञानपीठ में भेजें। लेख भेजने की अन्तिम तीथि प्रत्येक महिने की 1 तारिख तक रहेगी। समय पर भेजे गये लेखों को ही उस महिने की पत्रिका में प्रकाशित किया जायेगा।अन्यथा आगे आनेवाली महिनों में प्रकाशित की जायेगी।

लेख भेजने का नियम–
1–शुद्ध टाईप होनी चाहिए।
2–हस्तलिखित शुद्ध एवं स्पष्ट होना चाहिए।
3–टाईप किया गया लेख हो तो ओरजिनल कांपी होनी चाहिए।
4–डाक से ज्ञानपीठ के पते भर भेज सकते हैं।
5–हस्तलिखित लेख को PDF बनाकर ही भेजें, ताकि पढने में और टाईपिंग में असुविधा न हो।

तारतम मंजरी मासिक पत्रिका "लेख" प्रेषित हेतु एवं अन्य कोई भी असुविधा के लियें निम्नलिखित EMAIL और दूरभाष नम्बरों पर सम्पर्क करें।

tertammanjari@gmail-com

+9193141 93262 (जूनेजा बाबूजी)
+919725389547 (आचार्य सुभाष जी)

''विनाश का पर्याय मांसाहार'' पुस्तक से कुछ अंश

कबीर वाणी का मन्तव्य

डॉ. प्रवीन

हिंदी साहित्य के निर्माताओं में कबीरजी का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। उन्होंने सर्वप्रथम मानवता की पूजा की। वे सत्य को ही परमात्मा मानते थे और सच्चे पथ प्रदर्शक थे। चूंकि उनका युग पारस्परिक संघर्श का युग था इसलिए वे चाहते थे कि ऐसे धर्म की स्थापना हो जो संपूर्ण विशमताओं को दूर कर हिंदू–मुसलमान सबको एक सूत्र में बांधे। उन्होंने दोनों समुदायों में एकता का प्रबल दावा पेश किया और कहा जाता है कि मरणोपरान्त उनकी अस्थियां भी दोनों सम्प्रदायों ने बांट ली थी।

वे जब तक जीवित रहे उनके अलोचकों की भारी संख्या हो गयी थी, परंतु उनके मुख से निकला एक–एक शब्द उनके मरने के बाद एक मंत्र बन गया जिससे पूरे विश्व को एक नई दिशा मिली। दस इन्द्रियां और 11 वें मन को मिलाकर उन्होंने एकादश प्रकरण लिखे जो रमैनी, शब्द, ज्ञान चौतीसा, विप्रमतीसी, कहरा, बसन्त, चाचर, बेलि, बिरहुली, हिण्डोला और साखी के नाम से जाने जाते हैं।

कबीरदास जी वास्तव में हिंदू मुसलमान दोनों के पीर के रूप में आविर्भूत हुए। जब दोनों सम्प्रदायों में आडम्बर और पाखंड आदि रूढ़ियों से मानवता कराह रही थी, तब कबीरजी ने अपनी वाणी का अमृत बरसाया। कहीं–कहीं तीखी आलोचनों की झाड भी लगाई। इन्ही आडम्बरों में एक आडम्बर पशु बलि और धर्म की आड़ में मांसाहार का था। 'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्' की अपेक्षा स्पश्ट दो टूक खरी–खरी इस विशय पर देखने को मिलती हैं। यहां मूल बीजक से कुछ उदाहरण दिए जा रहे है–

काजी काज करहु तुम कैसा।
घर घर जबह करावहु भैंसा।
बकरी मुरगी किन्ह फुरमाया।
किसके कहे तुम छुरी चलाया।
दर्द न जानहु पीर कहावहु।
बैता पढ़ि–पढ़ि जग भरमावहु।
कहहि कबीर एक सैयद बोहावे।
आप सरीखा जग कबुलावे।
दिन को रखत हैं रोजा,
राति हनन है गाय।
यह खून वह बंदगी,
क्यों कर खुशी खुदाय।

ए काजी, तुम कैसा काम करते हो जो घर–घर भैंस कटवाते हो अर्थात् क्या यही तुम्हारा पीर, पैगंबर, हजरत कहता है?तुम्हें बकरी और मुर्गी मारने की आज्ञा किसने दी अर्थात् किसके कहने से तुमने मूक प्राणियों पर छुरी चलाई?मेरी समझ में तो कोई ईश्वर ऐसी आज्ञा नहीं दे सकता। केवल

जिह्वा स्वाद के लिए तुम यह सब करते हो, तुम दूसरों का दर्द नहीं जानते और पीर कहलाते हो। तात्पर्य यह है कि खुद तो गोश्त आदि खाते हो और लोगों को कविता, शेर आदि पढ़कर बहकाते हो। सतगुरू कहते है कि मुसलमान में एक वर्ग अपने आपको श्रेश्ठ कहता है जो सैयद कहलाता है और अपनी बातों को जबरन दूसरों पर लादता है। रमजान के महीने में मुसलमान लोग दिन में तो रोजा रखते है, अन्न–पानी सब छोड़ देते है और रात होते ही गाय काटते है, बकरी और मुर्गी मारते हैं और इनका मांस खाते हैं। एक तरफ जीव हत्या करते हैं और दूसरी ओर नमाज पढ़ते हैं। प्रश्न यह है कि इस परस्पर विरोधी चाल व दोहरी नीति से अल्लाह कैसे खुश होगा?

प्रश्न–1 यह तो कबीर जी ने दो टूक खरी खरी कह डाली है ?मांसाहारी ब्राह्मणों के लिए कबीर जी के क्या विचार है ?

उत्तर– कबीर जी के अनुसार हिंदू और मुसलमान दोनों ही निर्दयी हैं क्योंकि दोनों मूक पशुओं का वध करते हैं। देखिए संतों और पांडों के लिए कबीर जी ने क्या कहा है–

'संतो पांडे निपुण कसाई'
बकरा मारि भैंसा पर धावैं।
दिल में दर्द न आई।
करि स्नान तिलक दे बैठे।
विधि सों देवि पुजाई।
आतमराम पलक में बिनसे।
रूधिर की नदी बहाई।
अति पुनीत उचे कुल कहिये।
सभा मोहि अधिकाई।
इन्हते दीक्षा सब कोई मांगे।
हंसी आवै मोहि भाई।
पाप कटन को कथन सुनावै।
कर्म करावै नीचा।
हम तो दूनों परस्पर देखा।
यम लाये है धोखा।
गाय बधे ते तुरूक कहिये।
इनते वै है क्या छोटे।
कहहि कबीर सुनो हो संतो।
कलि मा ब्राह्मण खोटे।
शब्द 11

संतो! धर्म के नाम पर जीव हत्या कहां का न्याय है?ब्राह्मण भी चतुर कसाई है। जीव हत्या करके भी ये पूज्य बने रहते है। देवी–देवताओं के मंदिरों में या देवस्थानों पर बकरा मारकर चढ़ाते हैं। भैसे पर भी धावा बोलते हैं। इनके दिल में दया नहीं आती। वैसे तो स्नान करते हैं, तिलक लगाते हैं, पूजा करते हैं परन्तु विधिपूर्वक पूजादि कर निर्जीव मूर्ति के सामने जीव हत्या कर देते हैं और इसे पवित्र मानते हैं। सभी सभाओं में इनकी इज्जत होती हैं। इन्हीं लोगों से सब दीक्षा मानते है और इनके शिश्य बन जाते हैं। कबीरजी कहते हैं कि सब इन्हें पूज्य मानकर दीक्षा लेते है, परंतु मुझे तो इन पर हंसी आ रही है।

स्वयं ही जीव वध कराते हैं और पाप काटने के लिए कथा भी सुनाते है। मैंने इनके कथन और कर्म का मिलान किया तो यमराज की लीला या धोखा ही लगती है। यमराज के धोखे या जाल में ये सब है। गाय मारने वाले तो तुरूक कहलाते है, परंतु अन्य पशुओं का वध कराने वाले ब्राह्मण उनसे कम पापी नहीं है। कबीर जी कहते है कि हे संतो, जीव वध करनेवाले ब्राह्मण भी खोटे हैं।

कबीर जी के समय हिंदू और मुसलमान दोनों ही अपने उद्देश्य और राह को भूल चुके थे।

उन्होंने दोनो को दया और प्रेम का रास्ता दिखाया। देखिए कुछ अन्य उदाहरण–

संतो राह दुनों हम दीठा।
हिंदू तुरूक हटा नहि माने।
स्वाद सबन को मीठा।
हिंदू बरत एकादशी साथे।
दूध सिंघारा सेती।
अन्न को त्यागे मन को न हटके।
पारन करे सगौती।
तरूक रोजा निमाज गुजारे।
बिसमिल बाग पुकारे।
इनको बिहिस्त कहां से होवै।
जो सांझे मुरगी मारे।
हिंदू की दया मेहर तुरूकन की।
दोनों घर से त्योगी।
ई हलाल वै झटका मारें।
आग दुनों घर लागी।
हिंदू तुरूक की एक राह है,
सतगुरू सोई लखाई।
कहहि कबीर सुनो हो संतो।
राह कहूं खुदाई।।
शब्द 10

कबीर जी कहते हैं कि हमने दोनों रास्ते देख लिए हैं। हिंदू मुसलमान कोई भी अच्छी सीख नहीं जानते और जिह्वा स्वाद के ही प्रेमी हैं। हिंदू एकादशी व्रत तो करते हैं परन्तु अन्न को छोड़कर दूध, सिंघाड़ा आदि जमकर खाते हैं और द्वादशी को मांस के सहित पारण करते हैं। तात्पर्य यह है कि दस इन्द्रिया एवं 11 वां मन, इस एकादशी को नहीं देखते और ढोंग करते हैं। इसी प्रकार मुसलमान रमजान के महीने में रोजा रखते हैं, दिन में व्रत रखते हैं, परन्तु रात में जमकर खाते हैं, दिन में नमाज पढ़ते है और अल्लाह का नाम लेकर मस्जिदों में अजान देते हैं, परन्तु रात होते ही मूक प्राणी मुर्गी आदि मारकर खा जाते हैं। भला इन्हें स्वर्ग या जन्नत कैसे मिलेगा?

हिंदू और मुसलमान दोनों ही निर्दयी हैं क्योंकि मांसाहारी हिंदू भी मूक पशुओं का वध करते है और मुसलमान भी। अंतर केवल इतना है कि हिंदू एक झटके में वध करते हैं और मुसलमान छुरी से गला रेतकर धीरे–धीरे वध करते हैं। दोनों क्रूरता की आग में जल रहे हैं। सम्पूर्ण मानव जाति का असली रास्ता दया और प्रेम ही है और सच्चा गुरु वही पथ बतलाता है। संतों! अगर राम और खुदा को पाना चाहते हो तो प्राणियों पर दया करो, तभी कल्याण हो सकता है, अन्यथा नहीं।

वेद कतेब पढ़े कै कुतना।
वे मोलाना वे पांडे।
बेगर बेगर नाम धराये।
एक मिट्टी के भांडे।
कहाहे कबीर वे दोनों भूले।
रामहि किनहुं न पाया।
वे खसी वे गाय कटावै।
बदिहि जन्म गमाया।।
शब्द 30

आगे समझाते हैं कि वेद–शास्त्र पढ़ने वाले पंडितों और कुरान की किताब पढ़ने वाले मौलविओं ने अलग–अलग भाशा में अलग–अलग नाम रखे हैं परन्तु सब एक ही मिट्टी के बने हैं। तात्पर्य यह है कि दोनों ही अपने रास्ते को भूल चुके हैं। मुसलमान राम को नहीं समझते और हिन्दू रहीम को। हिन्दू देवस्थानों पर बकरे का वध करते हैं तो मुसलमान अल्लाह के नाम पर गाय की कुरबानी देते हैं। वाद–विवाद में मनुश्य जन्म जो कि अमूल्य है, गंवा बैठते हैं।

भोख सैयद कितेब निरखें।
स्मृति भाास्त्र विचार।
सतगुरु के उपदेश बिनु तै।
जानि के जीव मार।
कर विचार विकार परिहरि।
तरण तारण सोय।
कहाहें कबीर भगवन्त भजु नर।
दुतिया और न कोय।
शब्द 60

शेख और सैयद इस्लामी किताबें पढ़कर और पंडित शास्त्र और पुराण पढ़कर विचार तो करते हैं, परन्तु सतगुरु का यथार्थ उपदेश न मिलने से यह हत्या और हिंसा को बुरा जानते हुए भी कुर्बानी और वध करते कराते हैं। इसलिए हे लोगों! विचार करके माया, मोह और हिंसात्मक विचारों का त्याग करो। सतगुरु मुक्ति पथ पर प्रेरित करने वाले हैं। कबीरदास जी कहते हैं ज्ञान और वैराग्य से संपन्न सद्गुरु की सेवा करो। उसी से तुम्हारा कल्याण संभव है, क्योंकि इनके अलावा तुम्हारा पथ प्रदर्शक कोई नहीं।

प्रश्न–2 बहुत खूब, ऐसा समन्वय तो कहीं नहीं देखा। निश्पक्ष होकर सबको ताड़ना लगाई है। झूठे कर्मकाण्ड की तो कमर पर सीधा प्रहार किया है।
उत्तर– जी हां, आगे देखिए। सूतक, पातक, जनेऊ जैसी बातों की भी यथार्थता खोल दी है–
पंडित एक अचरज बड़ होई–

एक मरि मुये अन्न नहिं खाई।
एक मरे सिझै रसोई।
करि अस्नान देवन की पूजा।
नौ गुण कांध जनेऊ।।
हंडिया हाड. धड़ थरिया मुख।
अब शट कर्म बनेऊ।
धर्म करे जहां जीव बधतु हैं।
अकर्म करे मोरे भाई।
जो तोहरा को ब्राह्मण कहिए।
तो कोको कहिये कसाई।
कहिहिं कबीर सुनो हो सन्तो!
भरम भूलि दुनियाई।
अपरम्पार पार पुरुशोत्तम।
या गति विरले पाई।।
शब्द 46

हे पंडितों! एक बात का हमें बड़ा आश्चर्य है कि यदि किसी के घर में कोई मर जाए तो आप दस दिन तक यानि शुद्धि कर्म तक भोजन नहीं करते, परन्तु यदि बकरा या मछली मिल जाय तो उसकी लाश को लाकर रसोई में पकाते हो और बड़े ही स्वाद से खाते हो। एक तरफ तो स्नान करते हो, पूजा–पाठ करते हो, जनेऊ पहनते हो और दूसरी तरफ हाड़ मांस पकाते हो, परोसते हो और मुख से चबाते हो। यह दोनों विरोधाभासी बातें समझ में नहीं आती हैं।

हे भाईयों! जहां धर्म के नाम पर एवं देवपूजन या ईश्वर पूजन के लिए जीव वध किया जाता है वह क्या यह प्रत्यक्ष दुश्कर्म नहीं है?ऐसी स्थिति में अगर तुम्हें ब्राह्मण कहा जाय तो बधिक या कसाई किसे कहा जाएगा? कबीर जी कहते हैं कि हे संतों सुनो! सांसारिक लोग भ्रम और भूल में भटक गए हैं एवं उल्टे रास्तों पर चले रहे हैं। हद और बेहद से परे वह पुरुशोत्तम है, परन्तु वह सर्वोच्च स्थिति तो कोई विरला ही प्राप्त करता है।

कबीर जी का कहना था कि कितना दुर्भाग्य है कि मिट्टी के निर्जीव देवी–देवताओं को प्रसन्न करने के लिए सजीव प्राणियों को काटकर चढ़ाया जाता है। देखिये कबीर जी की एक ओर साखी–

जस मास पशु की तस मास नर की,
रुधिर रुधिर एक सारा जी।
पशु की मास भखे सब कोई।
नरहिं न भखें सियारा जी।
ब्रह्म कुलाल मेदनी भइया।
उपजि विनाशि कित गइया जी।
मास मछरिया तै पै खइया।
ज्यों खेतन में बोईया जी।
माटी के करि देवी देवा।
काटि–काटि खिन देइया जी।
जो तोहरा है सांचा देवा।
खेत चरत क्यों न लेइया जी।
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो!
राम नाम नित लेइया जी।
जो कुछ कियहु जिभ्या के स्वारथ।
बदला पराया देइया जी।

कबीरदास जी कहते है कि मनुश्य और पशु का मांस क्या अलग–अलग रंग का होता है? नहीं होता, बल्कि एक जैसा होता है, रक्त में कोई फर्क नहीं है फिर क्यों पशुओं का मांस खा जाते हो जबकि मनुश्य का मांस तो सियारों को भी नहीं खाने दिया जाता। कुम्हार घड़ा बनाता है और उसकी तुलना ब्रह्मा द्वारा सृश्टि रचने के रूप में की जाती है। वह भी जन्म लेकर मर गया और उसका पता नहीं रहा। मनुश्य अपने शरीर का अहंकार करते हैं और यह कितने पागलपन की बात है कि उसे दूसरों के मांस के द्वारा मजबूत बनाना चाहते हैं। तुम तो मांस मछलियों को ऐसे खाए जा रहे हो जैसे इन्हें खेत में बोया गया हो।

दुर्भाग्य इस बात का है कि निर्जीव मूर्तियों को प्रसन्न करने के लिए सजीव प्राणियों को काटा जा रहा है। तुम्हारी बुद्धि भ्रश्ट हो गई है। यदि तुम्हारे देवी–देवता सच्चे हैं और मांस आदि के इतने भूखे रहते हैं तो मैदान में चरते हुए पशुओं को क्यों नहीं खा जाते?जंगली पक्षियों को जो कि उड़ते रहते हैं क्यों नहीं खा जाते? हे संतों! ये सांसारिक प्राणी राम–राम तो रोज जपते है परन्तु प्राणियों के मन में रमने वाले राम पर दया नहीं करते। जिस जिह्वा स्वाद के लिए तुम निरीह प्राणियों की हत्या करते हो एक दिन उसका बदला समय से देना ही होगा।

प्रश्न–3 हमने सुना है कि मुहम्मद साहब ने खुद एक गाय को मारा था। क्या यह सत्य है?
उत्तर– कबीर जी की एक साखी है–

मारी गउ भाब्द के तीर,
ऐसे थे मुहम्मद पीर।
शब्दै फिर जिवाई, हंसा राख्या मांस नहीं
भाख्या, ऐसे पीर मुहम्मद भाई।।

यह सत्य है कि मुहम्मद ने एक बार अपनी शक्ति से एक गाय को मारा था लेकिन फिर उसी शक्ति से उसे जिन्दा भी कर दिया था। लोगों को पूरी कहानी नहीं पता। बस एक अंश लेते है और गाय का कत्ल करते हैं। मुहम्मद का संदेश है कि अगर आप किसी को जीवन दे नहीं सकते तो उसका जीवन छीनने का भी आपको कोई अधिकार नहीं। अगर मान लिया जाय कि जिस की बलि दी जाती है वह स्वर्ग में जाता है तो कबीर जी कहते हैं

कबीर–पीर सबन को एकसी,
मुरख जानै नाहिं।
अपना गला कटाए के,
क्यों न बसो भिस्त के मांहि।।

अगर गला काटने से पशु स्वर्ग में पहुंच जाता है तो तुम अपना गला रेत कर स्वर्ग में क्यों

नहीं पहुंच जाते। जिस प्रकार ऐसी कल्पना करके तुम्हारे रौंगटे खड़े हो जाते है, वैसी पीड़ा उन पशुओं को भी होती है लेकिन मूर्ख लोग नहीं समझते। अगर काजी का सगा बेटा मर जाए तो वह कितना दुःखी होता है। तो फिर जो सबका पिता है वह अपने बेटों की कुरबानी से कैसे खुश हो सकता है?

कबीर काजी का बेटा मुआ,
उर में सालै पीर।
वह साहब सबका पिता,
भला न मानै वीर।।

ऐसे ही कई प्रश्न कबीर जी ने बलि देने वालों से पूछे हैं

कबीर मुल्ला तुझै करीम का,
कब आया फरमान।
घर फोरा घर घर बांटा,
साहब का निसान।।

तुम हलाल करते हो फिर उसे बांटते हो। खुद भी खाते हो। ऐसा करने का आदेश तुम्हें परमात्मा ने कब दिया?

कबीर जोर करि जबह करै,
मुखसों कहै हलाल।
साहब लेखा मांगसी,
तब होसी कौन हवाल।।
कबीर जोर कीयां जुलुम है,
भोगै ज्वाब खुदाय।
मालिक दर खूनी खड़ा,
मार मुहीं मुंह खाय।

तुम बलपूर्वक मूक जानवरों को मार डालते हो और इसे हलाल कहते हो। यह तो एक जुर्म है। जब न्याय के दिन तुम्हारी बारी आएंगी तो खुदा तुमसे इसका हिसाब मांगेंगे। तब तुम्हारा क्या हाल होगा?

कबीर गला काटि कलमा भरै,
कीया कहै हलाल।
साहब लेखा मांगसी,
तब होसी कौन हवाल।
कबीर गला गुस्सा को काटिये,
मियां कहर कौ मार।
जो पांचू बिस्मिल करै, तब पावै दीदार।

गला काटकर कलमा पढ़ने वालों से खुदा न्याय के दिन हिसाब मांगेगा। अगर काटना है तो क्रोध का गला काटों काम, क्रोध, मोह, लोभ और अहंकार की बलि चढ़ाओ। जो इन पांचों की बलि चढ़ा देगा वही खुदा का दीदार पाएगा।

कबीर कहता हूं कहि जात हूं,
कहा जो मान हमारा।
जाका गला तुम काटि हो,
सो फिर काटै तुम्हारा।।

मैं बार–बार कहता हूं। तुम मेरी बात मान लो। जिसका गला आज तुम काट रहे हो, कल वही तुम्हारा गला काटेगा।

कबीर बकरी पाती खात है,
ताकी काटी खाल।
जो बकरी को खात है,
तिनको कौन हवाल।।
कबीर मुर्गी मुल्ला सो कहै,
जवह करत है मोंहि।
साहब लेखा मांगसी, संकट परिहै तोहि।।

एक बकरी पत्ते खाकर अपना पेट भरती है तो भी उसकी खाल उतार ली जाती है, लेकिन तुम मांस खा खाकर अपना पेट भर रहे हो तो तुम्हारा क्या हाल होगा। एक मुर्गी मुल्ला से कहती है कि आज तू मुझे जिबह कर रहा है। न्याय के दिन खुदा तुझसे इसका हिसाब मांगेगा, तब तेरा क्या हाल होगा?

प्रस्तुत उदाहरणों से स्पश्ट है कि धर्म की दुहाई देकर किया जाने वाला मांसाहार एक घृणित कार्य है और सर्वथा त्याज्य है। जिस प्रकार पिता अपने पुत्र के कश्ट से प्रसन्न नहीं हो सकता, उसी प्रकार संपूर्ण जगत के पिता को उसी की संतानों का कत्ल करके कदापि प्रसन्न नहीं किया जा सकता। अपनी तृश्णा की पूर्ति के लिए धर्म की ओर से किया जाने वाला यह कार्य किसी भी प्रकार उचित नहीं ठहराया जा सकता। ऐसे में इन विशयों पर कबीर जी द्वारा पूछे गए प्रश्न सबके मुख पर ताला लगा देते हैं। संत का काम तो राह दिखाना होता है, समाज उस पर चले या न चले वह इससे विचलित नहीं होता। किन्तु कभी–कभी वह व्यथित जरुर होता है। तभी ऐसी खरी–खरी बातें मुख से निकलती है। चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, कबीर जी की शिक्षाएं दोनों वर्गों के लिए है। दोनों को मिलकर विचारना चाहिए कि हिंसा और धर्म दोनों एक साथ नहीं रह सकते हैं। जहां धर्म है वहां हिंसा नहीं और जहां हिंसा है, वहां धर्म का प्रश्न ही नहीं उठता। अतः हिंसा और धर्म को जोड़ना एक दोहरी मानसिकता का द्योतक है जिसका परिणाम बहुत घातक सिद्ध हो सकता हैं–

बात करते है पुण्य की,
करते है घोर अधर्म।
दोनों नरक में पड़हीं,
कुछ तो करो भार्म।।

परिक्रमा

'परिक्रमा' का अर्थ होता है हर पल अपने आराध्य से जुड़े रहना अथवा उसके सान्निध्य में रहना। यह चार प्रकार से संपादित होती है। जब हम मन्दिर या अपने आराध्य (मूर्ति/ग्रन्थ) के चारों ओर घूमते हैं तो यह 'शारीरिक परिक्रमा' कहलाती है। शरीर से संपादित की जाने वाली परिक्रमा शरियत अथवा कर्मकाण्ड की श्रेणी में आती है। परन्तु जब हमारा मन हर पल अपने आराध्य या ईष्ट की तरफ लगा रहे तो इसे 'मानसिक परिक्रमा' कहते हैं। चर्चनी 'बौद्धिक परिक्रमा' का रूप है जब हम अपनी बुद्धि से परमधाम के 25 पक्षों में विचरित करते हैं। अन्त में, 'आत्मिक परिक्रमा' आती है जब शरीर, मन एवं बुद्धि से कोई लेना–देना नहीं होता और हमारी आत्मा इन तीनों से परे होकर, अपने जीव भाव को भूलकर तथा अपनी परात्म का श्रृंगार सजकर अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत श्री राज जी को साक्षात रिझाती है।

प्रस्तुति : **नैन्सी**

सत्य की खोज

गीता ठाकुर

इनसान के सामने हमेशा एक सवाल रहा है: ' **क्या परमात्मा है ?यदि है तो वह कौन है या क्या है ?उसके साथ सम्पर्क कहाँ और कैसे किया जा सकता है ?क्या उस परमात्मा ने अपने बारे में इनसान को कभी कुछ बताया है ?' हालाँकि ऐसे सवालों का ज़बाब देने के लिए अनेको ग्रन्थ लिखे जा चुके हैं. लेकिन केवल एक जबाब के अलावा इसका कोई ज़बाब नहीं हो सकता । इसका सही जबाब सिर्फ सतगुरु ही दे सकते हैं । बाकी सब जबाब केवल अनुमान और कल्पना पर आधारित हैं ।**

अब हम परमात्मा से मिलना चाहते हैं लेकिन मिलें तो मिले कैसे ?परमात्मा के बारे में बहुत कुछ सुनते हैं, जैसे कि वह एक शहंशाह, जिस से मिलने के लिए हमें कोई माध्यम चाहिये जैसे कि कोई सतगुरु, मार्गदर्शक या धर्म प्रचारक जो उस अन्तर के रास्ते की वाकफियत रखता हो । परमात्मा से मिलाप के बारे में मनुष्य ने कितनी धारणाएँ बना रखी हैं । दर्शनशास्त्र की सभी धारणाओं के विद्धान इससे सहमत हैं कि जीव के अस्तित्व का मुख्य उद्देश्य परमात्मा से मिलाप है । पर मिलाप किया जाये तो कैसे ?

इस विषय पर उनकों कोई सही जानकारी नहीं है । इसलिए वह पढ़ते–पढ़ाते हैं, चर्चा–गोष्ठी करते हैं और फिर बहुत से लोगों को उपदेश देने लगते हैं । पर यह परमात्मा का ही बनाया हुआ क़ानून है कि बिना सतगुरु के द्वारा बताये गए साधन यानी संतों के मार्ग के सिवा न तो इस धरती पर कभी किसी का परमात्मा से मिलाप हुआ है और न ही साक्षात्कार । किसी अन्य साधन से यह मिलाप संभव ही नहीं है ।

प्राचीन वैदिक युग के महान ऋषियों ने कहा है : ' तीन वस्तुएँ संसार में बहुमल्य और दुर्लभ हैं जो किसी इनसान को सौभाग्यवश परमात्मा की पा से प्राप्त होती हैं । वह हैं : **मनुष्य जन्म, मुक्ति की लालसा और पूर्ण सतगुरु की शरण ।**

यह सवाल बार–बार लगातार पूछा जाता है – सतगुरु की क्या आवश्यकता है ?जब इनसान इतनी तरक्की कर चुका है तब उसे किसी की क्या ज़रुरत है ?आम आदमी, विशेषकर पश्चिमी सभ्यता का जिज्ञासु अपने अहंकार के कारण हमेशा यह कहने के लिए तैयार रहता है कि उसे किसी प्रकार की सहायता की ज़रूरत नहीं है । वह बड़े गर्व से कहता है, 'मैं स्वयं अपने भाग्य का निर्माता हूँ । मैं अपने भाग्य का खुद विधाता हैं और उसको खुद दिशा दूँगा । मुझे ईश्वर तक पहुँचने का सीधा अधिकार है । मैं कोई अपंग नहीं हूँ जो मुझे किसी के सहारे की ज़रुरत पड़े । क्या इतने सारे संसार के आविष्कार हमने नहीं किये , तो परमात्मा को

खोजना क्या मुश्किल चीज़ है?'

यह एक अहंकार भरा कथन है जो किसी राजा को ही शोभा देता है भिखारी को नहीं । और यह अहंकार उनका मालिक से मिलने का रास्ता बंद कर देता है । जब मैं अपने घर की गली में घुसता हूँ तो एक कुत्ता गली के राजा की अदा में अपनी पीठ को सिकोड़ कर मुझे धमकाने के लिए जोर से गुर्राना शुरू कर देता है और मैं उसके अधिकारों का आदर करते हुए मैं उससे थोड़ा बच कर चलने लगता हूँ, जबकि हर शैतान बच्चा उसको लात मार कर निकलता है और वो उन्हें देखकर दुम दबा कर भाग जाता है । इसलिए अगर यदि कोई अपने आप को पहुँचा हुआ समझनेवाला अपनी स्वतंत्रता की घोषणा करना ठीक समझे – यहां तक सतगुरु से भी स्वतंत्रता की, तो मैं उनके ष्टिकोण का सम्मान करती हूं । पर मुझे संदेह हैं कि वे जीवन की समस्याओं से विचलित नहीं होंगें । कैसे कैसे दुःख दुनिया में हैं, जिन्हें देखकर रूह काँप उठती है । ऐसे लोग इस अवसर का लाभ उठाने की बजाय अपने हाथों से अपनी दुर्गति कर बैठते हैं और परमात्मा के द्वार अपने लिए बंद कर बैठते हैं ।

शायद इसलिए ऐसा है कि आजकल के लोगों की अहंकारी मनोवृति के लिये ढोंगी साधू, पाखण्डी धर्म प्रचारक ज़िम्मेदार हैं । देखा जाये तो यह सही और वाज़िब प्रतिक्रिया है । लेकिन उनको यह ज़रूर समझना चाहिये कि पूर्ण सतगुरु और धर्म प्रचारक में इतना फ़र्क़ होता है जितना दिन और रात में । धर्म प्रचारक तो ग्रन्थो के रट्टू तोतें हैं जो बिना अनुभव के उपदेश देते हैं । सतगुरु का उपदेश उनके निजी अनुभव पर आधारित है । सतगुरु का काम सिर्फ उपदेश देना नहीं है बल्कि उनका कार्यक्षेत्र बहुत विशाल है । वह अपने शिष्य की हर कदम पर रहमुनाई करते हैं ।

अगर आप को भारत से अमेरिका जाना हो तो आप को हवाई–जहाज से सफर करना पड़ेगा । अब एक अनुभवी पायलट आता है जो उस मार्ग से कई बार गया है और उसके पास उस क्षेत्र में प्रवेश करने तथा बीच में आनेवालों मुकामों पर रुकने का लाइसेंस भी है । वह इस उड़ाने की सेवा के लिए तैयार है पर हमारा अहंकारी मन कहता है, 'नहीं, धन्यवाद, मैं अपना विमान खुद उड़ाऊँगा । मुझे किसी की सहायता की आवश्यकता नहीं । उसे यह भी नहीं मालूम कि विमान को चलाते कैसे है ?

जहाज के दरवाज़े पर ताला लगा है और इसके पास उसकी चाबी नहीं है । पायलट ने बुद्धिमानी का परिचय देते हुए विमान को ताला लगा रखा है, क्योंकि अगर कोई अनाड़ी व्यक्ति यह जाने बिना कि क्या करने जा रहा, यात्रा शुरू करता है, तो निश्चित अपने लिए मुसीबत खड़ी कर लेगा । उन लोगों की भी स्थिति ऐसी है जो ये मान लेते हैं कि वे खुद आध्यात्मिक ऊँचाइयों तक पहुँच सकते हैं, जब कि उनको यह भी पता नहीं कि शुरुवात कहाँ से करनी है । अगर कोई व्यक्ति शुरुवात कर भी ले, तो किसी हालत में यात्रा नहीं कर पायेगा । मार्ग में सैंकड़ों बाधाएँ हैं, एक अनुभवहीन व्यक्ति के लिए इन बाधाओं का पार करना संभव नहीं है । आखिर जब मन को समझ आती है, तो पायलट से नम्रतापूर्वक कहता हैः 'मुझे अपना शिष्य बना लो और उड़ान भरना सिखाओ ।' एक सतगुरु को पाना बहुत ही नसीब की बात है । वह ही वह महबूब है जो जन्मों की तलाश के बात मिलता है ।

एक वो महबूब है जो नज़र–अन्दाज़ करे मुझे कितने जन्मों से, एक मैं हूँ जो दिलो–जान से

कुर्बान हूँ उसके नूरानी तसव्वुर की । उसके नूरानी चेहरे की मेहर भरी नज़र मन की कालिख को हटाने के लिए काफी होती है । उस के चेहरे का नूर करे बयाँ कहानी उसकी,पर मुक़ामे – हक़ का किस्सा सुनूं जुबानी उसकी ।

अगर एक बार ऐसे मुर्शिद का दया भरा हाथ अपने सिर पर आ गया और उसकी रहमत भरी नज़र शागिर्द पर पड़ गयी तो उसके दीदार के सामने सब कुछ फीका पड़ जाता है ।
इतनी मशरूफ हूँ अब दिलवर के तसव्वुर में,कि उसके ज़िक्र में साँस लेने की फुर्सत नहीं होती ।

जब शिष्य गुरु–पद पर पहुँच कर सतगुरु के शब्द–स्वरुप नूरानी और चुंबकीय सूक्ष्म रूप के दर्शन करता है और अमृत के मानसरोवर में अमृत–पान करता है तब यहाँ के सब झूठे लगाव हट जाते हैं । लेकिन दर्शन का मतलब देखना नहीं है । दर्शन दिए जाते हैं, लिए नहीं जाते । दर्शन तब नसीब होते हैं जब हम सतगुरु के हुक्म में चलते हैं और अपना अहम त्याग देते हैं । अपना मन सतगुरु को भेंट कर देते हैं और वह तभी कर सकते हैं जब मन अपने वश में हो । जो चीज़ अपनी नहीं, उसे कैसे किसी को भेंट कैसे कर सकते हैं ? जब मनमत गुरुमत में बदल जायेगी तब ही शब्द–स्वरुप गुरु के दर्शन होते हैं ।

ऐसी बदली हूँ तेरे दर पे आबे–हयात पीकर,
इस जहाँ से दिल लगाने की चाहत नहीं
होती। अब किसी के आने या जाने की फिक्र
नहीं मुझको, अब किसी शख्स से दिल लगाने
की की आदत नहीं मुझको ।

जब तक मन अपने वश नहीं आयेगा तब तक मायूसी ही बनी रहेगी और मन खुदा से बेरुख ही रहेगा । तुम पूछते हो सबब मेरी मायूसी का, भला कैसे बाँट लूँ ग़म सनम की बेरूखी का ।

सभी युगों में इनसान ने सत्य की खोज करते हुए मनुष्य ने परमात्मा तक पहुँचने के मार्ग की खोज या इस विषय को कुछ हद तक समझने की कोशिश की है । परंतु जो कुछ थोड़ी–बहुत सफलता उसे मिली है, वह अपनी समस्या साथ लेकर आई है । यह खोज करते–करते इनसान इधर–उधर भटकाने वाले रास्तों में चला गया है, फिर भी इस खोज से मानव जाति धीरे–धीरे प्रकाश की तरफ बढ़ रही है ।

प्राचीन ऋषियों से लेकर ज़रदुश्त और मैजाई तक, हरमीज़ और प्लेटो, कांत और एडवर्ड तथा नोर्थ्रोप आदि सभी ने अंतर की पीड़ा और चीत्कार के रूप में ये सवाल बार–बार दोहराये हैं, परंतु अपनी आवाज़ की गूँज की तरह ये प्रश्न भी केवल प्रश्न ही बने रहे । परमात्मा को कौन जान सकता है जब तक वह खुद न चाहे । जब वह चाहेगा तो इनसान आध्यात्मिक ऊँचाइयों पर पहुँचेगा , जहाँ परमात्मा के दर्शन किये जा सकते हैं।

हमें क्या करना है?

बबली (नलिनी) ढीगंरा, श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा

श्री निजानन्द सम्प्रदाय का ज्ञान सबसे ऊंचा ज्ञान समपूर्ण मानव मात्र के लिये हैं। इस समय श्री निजानन्द सम्प्रदाय के अनुयायी भारत वर्श के अनेक प्रान्तों गुजरात, महाराश्ट्र, बिहार, उत्तर–प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, आन्ध्र प्रदेश आदि में है। विदेशों में नेपाल, बर्मा, सयुंक्त राज्य अमेंरिका, कनाडा आदि देशों में भी फैले हुए है। इस प्रकार उनकी कुल जनसंख्या लगभग 30 लाख है। इस सम्प्रदाय का मुख्य स्थान श्री पदमावती पुरी धाम (पन्ना) है जो मध्य प्रदेश में स्थित है और सबके मुक्ति धाम के रूप में प्रसिद्ध है। हर प्रान्त में श्री प्राणनाथ मन्दिर या श्री कृश्ण प्रणामी मन्दिर के नाम से मन्दिर स्थपित किए गये है। हर मन्दिर में सिंहासन पर श्री कुलजम सरूप की वाणी ही पधराई हुई है।

सब का लक्ष्य एक ही है कि परमधाम में मूल मिलावा में बैठ श्री युगल सरूप राज श्यामा जी को मानना। निजान्द सम्प्रदाय की कुलजम सरूप वाणी का सर्वोच्च ज्ञान हमें बताता है कि पूर्णब्रह्म परमात्मा एक है। हिन्दु मुसलमान सिख ईसाई सब एक खुदा के बन्दे है। सम्पुर्ण विश्व में कुलजम सरूप वाणी फैलानी है। यह तभी हो सकता है जब हम निजानन्द सम्प्रदाय के अनुयायी एक हो कर चले। सोचने समझने की बात यह है कि क्या हम सब एक होकर चल रहे है। हम सब परमधाम में मूलमिलावे में जुगल किशोर श्री राजश्यामा जी के ही मानते है पर हम तनों मन्दिरो,मन्दिरों के पदों मान शान,मैं खुदी अहंकार,ईश्र्या के कारण ही एक हो कर नहीं चल पा रहें है।

मन्दिरों में श्री राजश्यामा जी की आरती–भोग दिन रात होता हैं। पाठ भी रखे जाते है। भजन सत्संग –भण्डारे भी होते है। सुन्दरसाथ का मिलावा भी होता है। सब अच्छा है पर जितनी जागनी का कार्य हर प्रान्तों से होना चाहिए नहीं हो रहा है। किसी की आत्मा को ब्रह्म ज्ञान सुना कर उसकी आत्मा को श्री राजश्यामा जी के चरणों में लगाए यही सबसे बड़ा कार्य है। ब्रह्मज्ञान से बड़ा कोई दान नहीं कोई सेवा नहीं और इसके लिए कुछ कुरबान करनी पड़ेगी। अगर हम सब दिल में प्रेम लेकर कुछ झुक कर एक हो कर चले तो पूरे विश्व में जागनी का कार्य शीघ्र ही फैलेगा और पूरे विश्व को कुलजम सरूप का अखंड खजाना जो हमारे पास है दे सकेगे। जब तक हम एक होकर नहीं चलेगे यह खेल भी खत्म नहीं होगा और ना ही महाप्रलय होगी और ना हम परमधाम जाग सकेगे।

महामत कहे मेहर की, रूहों आने एक नजर।
तो तबहीं रात को मेट के, जाहेर करे फजर।।

हम पूरे विश्व को एक पर्णब्रह्म की क्या पहचान करायेगे जब हम खुदा एक हो कर नहीं चल रहे। 30लाख सुन्दर साथ एक रूपये की सेवा दे सकता तो हम 30 लाख रूपये इकट्ठे कर सकते है। इन्हीं 30 लाख रूपयों से हम टेलीविजन अखबार फोनों,मोबाईलों द्वारा सबसे सम्पर्क करके पूरे विश्व को बता सकतो है कि हमारे पास कुलजम सरूप का वो खजाना हैं जिसके लिए लक्ष्मि जी ने भी सात कल्पांत तपस्या की पर ना पा सकी। हम टेली विजन में अपने प्रवचन रखे। हम संगी कला कारों से वाणी गायन करवाये। अखबारों में उस पूर्णब्रह्म सच्चिन्दानन्द के बारे में छपवाये–बताये इस दुनिया को कि परमधाम अखण्ड है मूलमिलावा है श्री राजश्यामा जी युगल किशोर सिंघासन पर विराजमान है जिन्होंनें इस ब्रह्माण्ड को मुक्ति देनी हैं।

निजनाम सोई जाहेर हआ,
जाकी सब दुनी राह देखत।
मुक्त देसी ब्रह्मांड को,
आए ब्रह्म आतम सत।।

यह कार्य कोई इतना आसान नहीं हैं जितना लिखने में आसान हैं। इस कार्य में वक्त लगेगा चाहे पांच दस वर्श लगे। जागनी के कार्य में बुजर्गो ने अपन अनुभव बांटना है और युवा वर्ग ने तन –मन –धन से सहयोग देना है। अधिक से अधिक विभिन्न भाशाओं में अभिव्यक्त करने विद्वनों कों तैयार किया जायेगा। अधिक से अधिक वाणी गायन कलाकार तैयार करने पड़ेगे जो संगीत की शिक्षा लेकर परे विश्व में वाणी गायन करेंगे। हम सबने अपने दिल को मन्दिर बनाना है। दिल में प्यार ले कर झुक कर अपनी मैं खुदी अहंकार ईर्श्या को त्याग कर अपने दिल में मूल मिलावे में बैठे युगल सरूप को बसा कर इस तरफ अपने कदम बढाने है। 30 लाख सुन्दर साथ जो श्री राज श्यामा जी के चरणों में आचुके है सब को इस कार्य में सहयोग देना पड़ेगा तभी यह कार्य शीघ्र हो पायेगा और तभी हम इस दुनियां को दुःखों से दूर कर योग माया में मुक्ति देकर अपने नूरी तनों में जाग सकेगे। पूरे विश्व में कुलजम सरूप की वाणी गूंजे यही हमारा लक्ष्य है।

बड़ी बड़ाई अपनी, सुनी हमारी हम।
हम दे मुक्त सबन को, जाए मिले खसम।।
वचन हमारे धाम के, फैले है भरथ खंड ।
अब पसरसी त्रैलोक में,
जित होसी मुक्त ब्रह्मांड।।

आज किसी को भी निजानन्द सम्प्रदाय के बारे में पता नही है। हमारी सम्प्रदाय का ज्ञान सबमें ऊंचा है। निजानन्द सम्प्रदाय सभी के धर्म ग्रन्थों का एकी करण करके एक पार ब्रह्म की पहचान कराता है। अब तक के किसी भी अवतार तीर्थ कर या पैगम्बर ने सभी के धर्म ग्रन्थों का एकी करण करके एक सच्चिदानन्द परब्रह्म की पहचान नहीं करवाई। श्री प्राणनाथ जी ने अपनी वाणी श्री कुलजम स्वरूप के द्वारा वेद और कतेब के ही आधार पर सच्चिदानंन्द पूर्णब्रह्म के स्वरूप की पहचान करायी है। हमारे पास सब ग्रन्थ मौजूद है साक्षी के लिए भागवत, गीता, वेद, कूरान, बार्हे बिल, भविश्य पुराण, गुय ग्रन्थ साहिब हम खोल–खोल कर सब ग्रन्थों में बता सकते है कहां क्या–क्या लिखा है।

जो कछु कहया ने, सोई कहया वेद।
दोऊ बन्दे एक साहेब के,
पर लड़त बिना पाए भेद।।

जब आत्मा जागृत होती है तो इश्क में डूब कर धाम धनी को पाती है। जब हम धाम धनी को

पालेते है तो हम समझते है सब हम ही हम हे इश्क वाले। ऐसा नहीं समझना चाहिए – **इ□क बड़ा रे सबन में, ना कोई इ□क समान।** यह बात ठीक है पर सोचो जागनी हमें इलम चाहिए अगर हमारे पास इलम नहीं होगा तो हम दूसरों को क्या बता पायेंगे कि क्षर अक्षर से परे अक्षरातीत कहां है। इलम होना जरूरी है तभी जागनी हो सकती है। मैं कौन हूँ, कहां से आया हूं तथा इस तन या ब्रह्मांड़ के नश्ट होने पर मुझे कहां जाना है?अक्षरातीत पूर्ण ब्रह्म का धाम कहां है?स्वरूप कैसा है तथा वहां की लीला कैसी है?इत्यांदि प्रश्नों का उत्तर होने में बड़े–बड़े ज्ञानी ध्यानी जंन भी मौन रह गये। इन प्रश्नों का उत्तर सरल हिन्दुस्तानी भाशा में श्री कुलजम रूवरूप (श्री मुख वाणी) में है। किसी ने भी आज दिन तक उस पुर्णब्रह्म को देखा नहीं ना पाया। विश्व में एक मात्र कुलजम सरूप की वाणी है जिसमें उस पूर्ण ब्रह्म की सूरत का वर्णन हे जिसके अन्दर वर्णित परिक्रमा, सागर, तथा सिनगार ग्रन्थ के अध्ययन एवं चितवनि प्रद्वति (परम धाम तथा परब्रह्म के ध्यान) के द्वारा पूर्ण ब्रह्म अक्षरातीत का पूर्ण रूप से साक्षत्कार किया जा सकता है।

धाम धनी श्री प्राणनाथ जी ने अपने साथ रहने वाले 5000 की संख्या वाल सुन्दरसाथ को श्री पन्नाजी में। 10 वर्शों तक चितवनि करवाई। सुन्दर साथ की आत्मा ने परम धाम के जर्रे–जर्रे का आत्मिक दृश्टि से दर्शन किया। आज हम चितवनि से दूर है। सेवा पूजा– पाठा– आरती भोग में लगे है। हमें सबको चितवनि की ओर ले चलना है। भजन बोलना अच्छा है। हर भजन श्री राज जी का ही गुणगान करता है पर सोचो अपने बनाये हुए भजन कीमती हे या कुलजमसरूप की वाणी गायन करना। तराज पर तोलो। हमारी इस जुबान से पल–पल कुलजम सरूप की चौपाइयां ही निकलनी चाहिए और याद रखो एक दिन ऐसा आयेगा जब यह वाणी पूरे विश्व मे गूजगी।

हम अपना धन कहां खर्च कर रहे है। हजारों रूपयो हम बढिया से बढिया रूमाल और बांके वस्त्र बनाने में खर्च कर रहे हैं। भण्डारों पर खीर, पूडी, लडडू, हलवा, में सारा धन खर्च हो रहा है। मन्दिरों की दिवालों को चमकाने में व्यय हो रहा है। हमें अपना धन ब्रह्म– ज्ञान फैलाने में लगाना है यही सबसे बडी सेवा हे।

अन्त में बडे अफसोस के साथ यही हूंगी। कि हमें जिस तरह से जागनी की ओर अपने कदम बढाने चाहिए हम नहीं हढा रहे। गांव–गांव शहरों में जागनी शिविर लगवाये जाये। साहित्य– पत्रिकाए टेलीफोन द्वारा सम्पर्क करके जागनी के कार्य में सहयोग दे ताकि ब्रह्म वाणी कुलजम सरूप की वाणी सारे विश्व में फैले।

प्रेम

प्रेम का तात्पर्य आकर्षण नहीं है – प्रेम इससे परे है। जहाँ शरीर व संसार के अस्तित्व का आभास हो, वहाँ प्रेम नहीं होता है। निःसंदेह परमधाम का ज्ञान तथा धनी के लिये विरह का होना अनमोल सम्पदायें हैं किन्तु प्रेम की महिमा इन सबसे बड़ी है। प्रेम शाश्वत और शब्दातीत है। चौदह लोगों के इस ब्रह्माण्ड तथा अनन्त कहे जाने वाले निराकार मण्डल को तो मापा जा सकता है परन्तु प्रेम को किसी भी स्थिति में मापा जाना सम्भव नहीं है। प्रेम ही परमात्मा है और परमात्मा ही प्रेम है।

प्रस्तुति : **नैन्सी**

दुख न देऊं फूल पाँखड़ी

कृष्ण कुमार कालड़ा, जयपुर

वैसे तो सम्पूर्ण तारतम वाणी में श्री राज जी ने हम सुन्दरसाथ से अनेकों बार कहा है कि वे यह बिल्कुल भी सहन नहीं कर सकते कि हमें इस माया के खेल में किंचित मात्र भी दुःख हो। वास्तव में श्री राज जी हमसे बहुत अधिक प्रेम करते हैं जिसका प्रमाण 'कलश हिन्दुस्तानी' ग्रन्थ के प्रकरण 11 चौपाई 33 में मिलता है जब वे महामति जी के धाम ह्रदय में विराजमान होकर कहते हैं : ''जो दुख मेरी सैयन को, तब सुख कैसा मोहे।'' स्पष्ट है कि यदि हमें किसी कारण से दुख होता है तो श्री राज जी भी स्वंय को प्रसन्न एवं सुखी नहीं अनुभव करते। इसी प्रकरण की पूर्व की चौपाई 32 में तो एक कदम बढ़ कर तो उन्होंने यहां तक कह दिया है कि ''जिन जुबां मैं दुख कहूं, सोए करूं सत टूक'' अर्थात् मेरी जिव्हा से यदि आपके लिये 'दुख' शब्द का उच्चारण भी हो जाय तो मैं इसके सौ टुकड़े कर दूंगा।

आईये, अब 'कलश हिन्दुस्तानी' वाणी के ही प्रकरण 23 पर एक विस्तृत दृष्टि डालें जिसमें भी धाम धनी ने स्वयं अथवा महामतिजी के द्वारा बार–बार हम सुन्दरसाथ को आश्वस्त किया है कि वे हमें किसी भी परिस्थिति में दुखी नहीं देख सकते। चौपाई 4 में तो उन्होंने यहां तक कह दिया है कि ''अब दुख न देऊं फूल पांखड़ी'' अर्थात् किसी के ऊपर फूलों की पंखुड़ियां फेंकने से जितना कष्ट होता है, वे हमें उतना कष्ट भी नहीं होने देंगे। इसी प्रकार, चौपाई 17 में श्री राज जी कहते हैं कि ''मन कलपे खेल देखते, सो ए दुख करूं सब दूर'' अर्थात् इस माया के खेल में यदि हमें कोई दुःख हो रहा है तो वे इसे पूर्णतया समाप्त कर देंगे क्योंकि जैसाकि अगली चौपाई 18 में कहा गया है :

मुख करमाने मन के, सो तुम्हारे मैं न सहूं।
ए दुख सुख को स्वाद देसी,
तो भी दुख मैं न देंऊ।।

अर्थात् यद्यपि माया का यह दुख हमें संसार से अलग कर परमधाम का सुख ही दिलायेगा, फिर भी यदि इसे देखने से हमारे मुख पर उदासी आती है तो श्री राज जी को यह भी स्वीकार्य नहीं है। हालांकि अगली चौपाई में हमें आश्वासित करते हुए वे कहते हैं :

सत सुख में सुख देयसी,
इन जिमी के दुख जेह।
तुम हंसोगे हरख में,
रस देसी दुखड़ा एह।।

अर्थात् माया के दुखों से संसार से हमारा ध्यान हट कर धामधनी पर केन्द्रित हो जायेगा जिससे यहां बैठे–बैठे हमें उनकी सान्निध्यता प्राप्त हो सकेगी। इस प्रकार, माया के दुख हमें परमधाम के सुखों के अनुभव के साथ–साथ यहां श्री राज जी को पा लेने का सुख भी मिल सकेगा। दूसरे शब्दों में, माया के ये दुख हमें धामधनी के प्रेम में डुबोकर इतना अधिक आनन्दित कर देंगे कि परमधाम में अपनी परात्म में जागृत होने पर हम खूब हसेंगे।

वैसे तो सुन्दरसाथ जी, जैसाकि अगली चौपाई 20 में स्पष्ट है कि

हम उपाया सुख कारणे,
ए जो मांग्या खेल तुम।

दुख दे वतन बोलावहीं,
ए इन घर नहीं रसम।।

अर्थात् हमने स्वयं ही श्री राज जी से यह माया का खेल देखने की इच्छा व्यक्त की थी जिसे पूर्ण करने के लिये ही इस ब्रह्माण्ड का निर्माण हुआ है यद्यपि परमधाम की यह परम्परा नहीं है कि हमें दुखी करके अपने मूल घर बुलाया जाय। यद्यपि दुख का अनुभव मूलतः जीव करता है तथापि उसका कुछ अनुभव आत्माओं को भी होता है। यह बात अलग है कि भोक्ता के रूप में जीव को जो अनुभव होता है दृष्टा के रूप में आत्मा को नहीं होता। जैसा कि चौपाई 23 ''दुख तो क्योंए देऊं नहीं, तो खेल देख्या क्यों जाए। खंत लगी खरी खेल की, तिनको सो एह उपाए।।'' से स्पष्ट है कि धामधनी हमें नाममात्र के लिये भी दुख नहीं दे सकते परन्तु इस अवस्था में हम यह खेल कैसे देखते? यह बात दूसरी है कि श्री राज जी ने हमें बार–बार मना किया था। उल्लेखनीय ही कि माया का दुख परमधाम के अनन्त सुखों के मुकाबले कुछ भी नहीं है।

इसी प्रकार, चौपाई 32 में भी श्री राज जी कहते हैं कि ''मैं तुम्हारे न सेहे सकों, जो देखे तुम दुख'' अर्थात् अब तक इस मायावी जगत हमने जो दुख देखा है वे पुनः नहीं होने वाला है। क्योंकि जैसा कि चौपाई 39 में कहा गया है कि ''अब दुख आवे तुमको, तहां आड़ा देऊं मेरा अंग'' अर्थात् यदि ऐसा होता भी है तो श्री राज जी ने तो यहां तक कह दिया है कि वे इसे अपने ऊपर ले लेंगे।

अतः उपरोक्त विवरण से यह पूर्णतया स्पष्ट है कि धामधनी हमें किसी भी स्थिती में दुख नहीं दे सकते। यह संसार दुखमयी अवश्य है जो हमें दुख दिखाने के लिये बनाया गया है न कि दुख भोगने के लिये। यदि हम इसे दृष्टा बन कर देखेंगे तो हमें दुख का बिल्कुल भी अनुभव नहीं होगा। जहां तक सुन्दरसाथ को जो रोग, वियोग, वृद्धावस्था अथवा धनाभाव आदि के कारण जो कष्ट होने का प्रश्न है तो इस सम्बन्ध में जैसाकि पूर्व में भी कहा जा चुका है कि शुभ–अशुभ कर्मों के कारण सुख–दुख का भोक्ता जीव है, आत्मा मात्र जीव पर बैठकर दृष्टा भाव से उसे देखती है। उसे सुख–दुख का ज्ञान तो अवश्य होता है परन्तु अनुभव नहीं।

इसी प्रकार यद्यपि माया के दुखों से संसार से वैराग्य उत्पन्न होता है जिससे हृदय में विरह उत्पन्न होता है जो अन्ततोगत्वा प्रियतम के लिये प्रेम में परिणत हो जाता है तथा इस खेल में अखण्ड आनन्द का अनुभव होता है। जैसाकि निम्न चौपाई 30 से स्पष्ट है :

दुख तुमारे मैं न सहूं,
सो जानो चित चौकस।
ए दुख देसी बोहोत सुख,
खेल होसी रंग रस।।

तथापि धामधनी निःसंदेह तारतम वाणी के प्रकाश में विवेक से ही विरह और वैराग्य के पक्षधर है क्योंकि वे हमें किसी भी स्थिति में दुखी नहीं देख सकते। वस्तुतः दुख की तीव्रता का अनुभव हमें तब होता है जब हम उसी का चिन्तन करते हैं। जैसा कि निम्न चौपाई 26 से स्पष्ट है :

लगोगे जो दुख को,
तो दुख तुमको लागसी।
याद करो जो निज सुख,
तो दुख तुमसे भागसी।।

अर्थात् यदि हम परमधाम की शोभा एवं लीला के आनन्द में खोये रहते हैं तो दुख हमें नगण्य–सा ही प्रतीत होगा।

इसी तथ्य को पूर्व की चौपाई 25 में भी दर्शाया गया है :

वस्तोगते दुख न कछू, जो पीछे फेरो दृष्ट।
जो देखो वचन जागके, तो नाहीं कछुए कष्ट।।

यदि हम जागृत होकर तारतम वाणी से विचार करते हैं तो पायेंगे कि यर्थाथ में इस संसार में दुख है ही नहीं। हमें बस अपनी दृष्टि को माया से हटाकर परमधाम की ओर करना है। फिर देखिये इस खेल का क्या आनन्द आता है। साथ ही, सुन्दरसाथ जी, श्री राज जी से अपने मूल सम्बन्ध को पहचानिये, तभी आपको सुख के निधान अपने प्राणेश्वर के अनन्त तथा अनादि प्रेम का अनुभव होगा।

भगवान शिव

प्रिया स्नेह, हिसार

जब भी मैं भगवान शिव की तस्वीर देखता हूं तो मुझे बहुत दुख होता है। अपने खुद के नशे की लत के लिए हम और कितना महादेव जी को बदनाम करेंगे? राज जी की कृपा से मैंने कुछ समय पहले शिव पुराण पढ़ा था ओर कहीं भी यह वर्णन नहीं आया कि भगवान शिव ने गांजा या चरस फूंकी हो, विपरीत इसके महादेव जी ने संसार की रक्षा के लिए हलाहल विष पिया था, लेकिन इसके बारे में कोई बात तक भी नहीं करता, परंतु हां 80% गंजेडी–चरसी जब गांजा चरस फूंकते है तो वे यही कहते हैं कि फिर क्या हुआ यह तो भोले का प्रसाद है। इन जैसे लोगों ने ना तो कभी भगवान शिव को जाना होता है ना कभी पढ़ा होता है ओर ना कभी जानने की कोशिश करते हैं परन्तु हां फूंकने के समय इनको शिव जी की याद आ जाती है। ऐसे लोगों को मैं कहना चाहूंगा कि ज़रा सोचो जो आंखे मूंदते ही प्रिया प्रियत्तम के प्रेम में निमग्न हो जाते हैं ।क्या ऐसे योगीश्वर को ध्यान समाधि लगाने के लिए किसी भी तरह के नशे की जरूरत है ??वे योगीश्वर है ना कि हम जैसे तुच्छ इंसान । उनको किसी सहारे की जरूरत नहीं है ,अपने आप में ही पूर्ण योगी हैं ।

कुछ अलंकारिक शब्दों के कारण हम योगीराज शिव के स्वरूप को जान ही नहीं पाते
योगिराज शिव का वाहन बैल है, बैल धर्म का प्रतीक है, अर्थात शिव धर्म पर चलते हैं, ना कि अधर्म पर।

योगीराज शिव के माथे पर गंगा है, गंगा मतलब ज्ञान, ज्ञान को सिर पर धारण किया जाता है। योगीराज शिव के मस्तक पर चंद्रमा है चंद्रमा शीतलता का प्रतीक है अर्थात ,योगीराज शीतलता को धारण करते हैं।

योगीराज शिव तन पर भस्म लगाते थे,जिसका कारण है कि वो काफी लंबी अवधि तक समाधी में रहते थे,तन पर भस्म लगाने से शरीर के रोम छिद्र बन्द हो जाते हैं जिससे बाह्य वातावरण का शरीर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।और एक संदेश भी दे रहे हैं। एक दिन सभी को राख होना है।

नशे की मस्ती में रहते थे,वो श्यामा श्याम के नाम का नशा करते थे ना कि कोई भौतिक वस्तु (गांजा चरस, सुल्फा आदि का) और आपकी जानकारी के लिए बता दें कि अमरनाथ जैसी ठंडी जगह पर भांग का पैदा होना बहोत ही कठिन है।

पौराणिक मान्यता के अनुसार समुद्र मंथन सावन के महीने में हुआ था तो जब मंथन में से 14 रत्न निकले थे, उन रत्नों को तो उस पाने के लिए तो देवता दैत्यों में भगदड़ मच गई थी परंतु ठीक

जब रत्नों के बाद पृथ्वी को नष्ट कर देने वाला हलाहल विष निकला तो कोई आगे ना आया,तब भगवान शिव आए और उन्होंने उस भयानक विष को अपने कंठ में धारण किया, जिसके कारण वे नीलकंठ व देवों के देव महादेव कहलाए। भगवान शिव के सहस्त्रो नाम में एक नाम है कर्पूरगौरम , जिसका अर्थ है पूर्णतः सफेद । लेकिन उस हलाहल विष के सेवन के बाद उनका शरीर नीला पड़ना शुरू हो गया और तपने लगा उनकी तपन को शांत करने के लिए उनके ऊपर जल चढ़ाया गया।

और हमने उन्हें चरस गांजा फूंकने वाला एक साधारण बना दिया, कुछ समय पहले ही मुझे मेरे मित्र पंड्या जी ने बताया कि उनके एक मित्र ने बताया कि कुछ वर्ष पहले ही अत्यधिक भांग के सेवन से उनका मित्र कोमा में चला गया था, और कुछ दिन बाद उसकी मृत्यु हो गई।

अब कुछ लोग कहेंगे कि विज्ञान भी इसे औषधि के रूप में स्वीकार करता है,हां करता है। लेकिन औषधि बीमार को दी जाती है।स्वस्थ को नहीं।

इस लिए मेरा आपसे निवेदन है कि आप योगिराज शिव के वास्तविक स्वरूप को पहचाने, ना कि सुनी सुनाई बातों पर ध्यान दें।

गतांक से आगे ...

कुछ घरेलू नुस्खे

आचार्य सुभाष • धरमराज

- गाजर– गाजर के रस में विटामिन 'ए' सर्वाधिक मिलता है। विटामिन ठए ब्ए क्ए म्ए और ज्ञ भी मिलते है।
- विटामिन 'सी' किसी भी रोग को ठीक करने की जिम्मेदारी निभा सकता है। यह मनुश्य के भावानात्मक तनाव को कम करता है। जो व्यक्ति जल जाते है, उनके लिए भी विटामिन 'सी' लाभदायी सिद्ध हुआ है। ऐसे मरीजों, जिन्हें शल्य–क्रिया (आपरेशन) के लिए ले जाया जा रहा हो, के लिए भी विटामिन 'सी' लाभकारी साबित हो सकता है। डॉ. क्लेनर ने तो कई मरीजों को रक्तधान के बिना सिर्फ विटामिन 'सी' देकर ठीक और बलिश्ठ रखा। ऐसे लोग जो एस्प्रिन अधिक मात्रा में लेते हैं, उनके लिए विटामिन 'सी' काफी उपकारी सिद्ध हुआ है। जो लोग तम्बाकू खाते, पीते या सूँघते हैं, उनका स्वसथ्य खतरे में बना रहता है। ऐसे लोगों के लिए विटामिन 'सी' वरदार सिद्ध हुआ है। उन्हें इसकी मात्रा, जितनी संभव हो उतनी, लेनी चाहिए। विटामिन 'सी' का प्रयोग शरीर को सीसा, संखिया, क्रोमियम, पारा बैंजीन, कार्बन–मानो ऑक्साइड जैसे जहरीले पदार्थों के कुप्रभाव से बचाता है। विटामिन 'सी' में सब प्रकार के विशैले प्रभावों को दूर करने की क्षमता है। विटामिन 'सी' के प्रमुख स्रोत नीबू, नारंगी, मिर्च आदि है। नित्य एक सिमला मिर्च खाने से विटामिन 'सी' की आवश्यकता पूरी हो जाती है। या नारंगी से भी

पूर्ति हो जाती है।

- चना– प्रातः अंकुरित चने का नाश्ता प्रत्येक रविवार को करना चाहिए। अच्छे चने 24 घण्टे पानी में भिगोए रखें, फिर इनको भीगे हुए कपड़े में 20 घंटे बँधा रखें। इससे हर चने में अंकुर निकल आते है। इन अंकुरित चनों पर नीबू निचोड़े, अदरक, काली मिर्च, सेंधा नमक स्वाद के लिए डाल सकते हैं। इस नाश्ते में विटामिन प्रचुर मात्रा में मिलता है। यह नाश्ता फेफड़ों को बलदायक, वजन रक्त बढ़ाता है तथा रक्त साफ करता है।

- आलू– आलूओं में मुर्गी के चूजों जैसी प्रोटीन होती है। बड़ी आयु वालें के लिए प्रोटीन आवश्यक है। आलूओं की प्रोटीन बूढ़ों के लिए बहुत ही शक्ति देने वाली और सूखे चावलों 6.7 प्रोटीन होती है। इस प्रकार आलुओं की अधिक प्रोटीन पायी जाती है।

- मूँगफली–मूँफली में प्रोटीन के साथ–साथ चिकनाई और शर्करा भी पाई जाती है। एक अण्डे के मूल्य के बराबर मूँगफली में जितनी प्रोटीन व ऊश्मा होती है उतनी दूध व अण्डे से संयुक्त रूप से भी नहीं होती है। इसकी प्रोटिन दूध से मिलती–जुलती है, चिकनाई भी घी से मिलती हैं। इन मूँगफलियों का दूध बना के भी काम में ले सकते हैं।

- दूध बनाने की विधि– नई मूँगफली के दानों को सेक लें और छिलका उतार लें। इन छिलके रहित दानों को दो घण्टे पानी में भिगोएँ और बाद में इन्हें बहुत बारीक पीस लें। मूँगफलियों के इन दानों को 5 गुने गुनगुने गर्म पानी में मिलाएँ और अच्छी तरह घोल कर मलमल के कपड़े में से छान लें। फिर इसे उबालें तथा उबालते समय हिलाते रहें। ठंडा होने पर इसे पीएँ। यह बिना दाँत वाले बच्चें, बूढ़े जो मूँगफली चबा नहीं सकते, पीएँ। अन्य लोग भी पी सकते है। एक प्याले दूध में एक चम्मच दही डालकर रख दें। गाय, भैंस के दूध की तरह जमकर इसका दही भी बन जाएगा।

- छिन्न, भिन्न, दबे हुए, क्षत, टूटे हुए, बिंधे हुए, आग में जले हुए, मृग या बाघ आदि से छत–विक्षत, टकराये हुए मुड़े हुए, टूटे हुए अर्थात् घाव पर कुचले जाने पर, जल जाने पर, पटके जाने पर और चिराने पर तिल का तेल अत्यन्त हितकारी है।

- स्त्रियों को यदि ऋतुस्राव के समय खूब पीड़ा रहती हो या मासिक ठीक से न आता हो तो तिल का सेवन करना चाहिए। एक तोला तिल को बीस तोला पानी में उबालकर चौथाई पानी रहने पर उतार लें। उसमें गुड़ डाल कर पीने से मासिक साफ आता है। तिल, जौ और शर्करा का चूर्ण शहद में मिलाकर खिलाने से सगर्भा और प्रसूता स्त्रियों का रक्तस्राव बंद होता है।

- तिल और गोखरू दूध में उबालकर पीने से धातुस्राव बंद होता है और नपुंसकता दूर होती है।

- काले तिल खाकर, ऊपर थोड़ा पानी पीने से दाँत मजबूत होते है, शरीर पुश्ट होता है। ओर रकतस्राव करने वाले अर्श नश्ट होते है।

- तील के तेल इका कुल्ला मुँह में 10–15 मिनट तक रखने से हिलते दाँत मजबूत बनते और पायरिया मिटता है।

- हींग, सूंघनी या काला नमक डालकर गर्म किया हुआ तेल पेट पर मलने और सेंक करने से पेट का दर्द या अफरा ठीक हो जाता है।

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी!

सादर प्रणाम जी!

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी ज्ञानपीठवासियों, विद्यार्थियों, आचार्यों एवं आगुन्तक अतिथियों में निशुल्क किया जाता है। आप सभी सुन्दरसाथ एवं उदारमना दानदाताओं से श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, रहने के लिए उत्तम व्यवस्था हो, उसके लिए आधुनिक ढ़ंग से गौशाला का निर्माण कार्य होने जा रहा है, इसके लिए जो भी सज्जन एवं सुन्दरसाथ दान देना चाहें ज्ञानपीठ उनका स्वागत करता है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं, और आप आने में असमर्थ हैं तो कृपया ज्ञानपीठ के खाते पर राशि जमा करके सूचित कर सकते हैं। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि आपके द्वारा दिया गया दान गौवों के संवर्धन में ही लगाया जायेगा।

।।धन्यवाद।।

विनम्र निवेदन

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा में शिक्षण, साहित्यिक एवं निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। जिन सुन्दरसाथ ने इन कार्यों के लिए अपनी सेवाएं लिखवायी है या स्वतः उनके मन में सेवा करने की इच्छा है, कृपया वे इन खातों में धनराशि भेजने का कष्ट करें। इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस सेवा की धनराशि भेजी जा रही है, मात्र उसी खाते की C.B.S.A/C संख्या में भेजें।

प्रणाम जी

सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया

1. खाता धारक का नाम–श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रष्ट
   खाता संख्या–3290805513
2. खाता धारक का नाम–श्री ज्ञानपीठ प्रकाशन
   खाता संख्या– 3290804553

पता–शाखा–सरसावा, सहारनपुर उ. प्र. 247232

MICR-Code - 247016005

IFSC CODE-CBIN0282531

सामान्य खाता संख्या
1335000100111916
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

साहित्य खाता संख्या
1335000100118751
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

भवन निमार्ण खाता संख्या
34971188767
भारतीय स्टैट बैंक
(11439) सरसावा, सहारनपुर
उत्तरप्रदेश, पिन- 247232
IFS CODE- SBIN0011439

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा से प्रकाशित साहित्यों की सूची

क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य	क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य
1.	श्री कुलजम स्वरूप (मूल)	700.00	36.	बोध मंजरी (नेपाली)	15.00
2.	श्री बीतक साहेब टीका	400.00	37.	बोध मंजरी (उड़िया)	15.00
3.	श्री रास टीका	150.00	38.	शाश्वत सत्य की ओर	15.00
4.	श्री प्रकाश टीका	300.00	39.	सत्य को बाटो (नेपाली)	15.00
5.	श्री कलश टीका	225.00	40.	संसार से परमधाम की ओर	20.00
6.	श्री खटरूती टीका	80.00	41.	श्री प्राणनाथ महिमा	20.00
7.	श्री किरन्तन टीका (हिन्दी)	300.00	42.	श्री ब्रह्मवाणी चर्चा	65.00
8.	श्री किरन्तन टीका (अंग्रेजी)	350.00	43.	निजानन्द संस्कार पद्धति	15.00
9.	श्री किरन्तन टीका (नेपाली)	300.00	44.	सेवा पूजा	30.00
10.	श्री खुलासा टीका	250.00	45.	मूल स्वरूप की ओर	80.00
11.	श्री सनंध टीका (अप्रकाशित)		46.	चितवनी	5.00
12.	श्री खिलवत टीका	180.00	47.	आर्ष ज्योति	120.00
13.	श्री परिक्रमा टीका	275.00	48.	तारतम के निर्झर	70.00
14.	श्री सागर टीका	170.00	49.	तारतम पीयूषम्	70.00
15.	श्री सिनगार टीका	300.00	50.	हमारी शाश्वत सम्पदा	60.00
16.	श्री सिन्धी टीका	150.00	51.	खाद्य परिशीलन	250.00
17.	श्री मारफत सागर टीका (अप्रकाशित)		52.	विनाश का प्रर्याय मांसाहार	60.00
18.	श्री क्यामत नामा टीका (अप्रकाशित)		53.	विराट नक्शा (केलेण्डर रूप में)	50.00
19.	श्री मुखवाणी संगीत	150.00	54.	सौवं क्यामतनामा	90.00
20.	विद्वददमनी	200.00	55.	अनमोल मोती	5.00
21.	पट दर्शन	200.00	56.	सागर के मोती	10.00
22.	धाम सुषमा	60.00	57.	नित्य पाठ	5.00
23.	जागो और जगाओ	100.00	58.	ये स्वर्णिम पल	10.00
24.	दोपहर का सूरज	60.00	59.	मुख्तार हिन्द	20.00
25.	प्रेम का चाँद	65.00	60.	शब–ए–मेयराज	15.00
26.	निजानन्द योग	60.00	61.	अफलातूनी इलम	20.00
27.	हमारी रहनी	50.00	62.	बुलन्द मुकदमा	40.00
28.	ब्रह्माण्ड रहस्य	40.00	63.	झूठ ही झूठ	60.00
29.	श्री मद्भागवत यथार्थम्	30.00	64.	यथार्थ दीपिका	30.00
30.	ध्यान की पुष्पांजली	70.00	65.	प्रश्नमाला	5.00
31.	कड़वे सच	50.00	66.	निजानन्द चित्रकथा	30.00
32.	तमस के पार (बड़ी)	40.00	67.	शेख जी मीर जी का बयान	20.00
33.	तमस के पार (छोटी)	20.00	68.	फरमान	30.00
34.	तमस के पार (पंजाबी)	40.00	69.	स्वास्थ्य के प्रहरी	30.00
35.	बोध मंजरी (हिन्दी)	15.00	70.	सत्यांजलि	40.00

सुभाषित वचन

- विवेक, वैराग्य, अभ्यास और श्रद्धा आत्मिक साधना के मूल आधार स्तंभ है।
- जब तक नाशवान् वस्तुओं में आसक्ति या सत्यता दिखेगी, तब तक परम सत्य का बोध नहीं हो सकता है।
- कमियां निकालना छोड़िए, प्रशंसा करने की आदत डालिए। प्रशंसा और प्रोत्साहन पाकर तो चींटी भी पहाड़ लाँघ जाया करती है।
- ज्ञान का अभ्यास न करने से, भोगों में आसक्त रहने से, चरित्र के नाश से, अभिमान के कारण दूसरों का तिरस्कार करने से, देवता भी पछताते हैं। मनुष्य तो क्या?

BOOK POST

RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18-2019-21

प्रकाशक
पू.श्री राजन स्वामी जी

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232

सम्पादक
श्री एस. पी. आर्य
भूतपूर्व आई. ए. एस.

तारतम मंजरी पत्रिका के स्वामी
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट, सरसावा
जिला–सहारनपूर, दूरभाष–8650851010
अवतरित न होने पर कृपया इस पते पर लौटाये।
धन्यवाद

सेवा में,